भगवद् गीता का सार

तटवर्ती वीर राघव राव

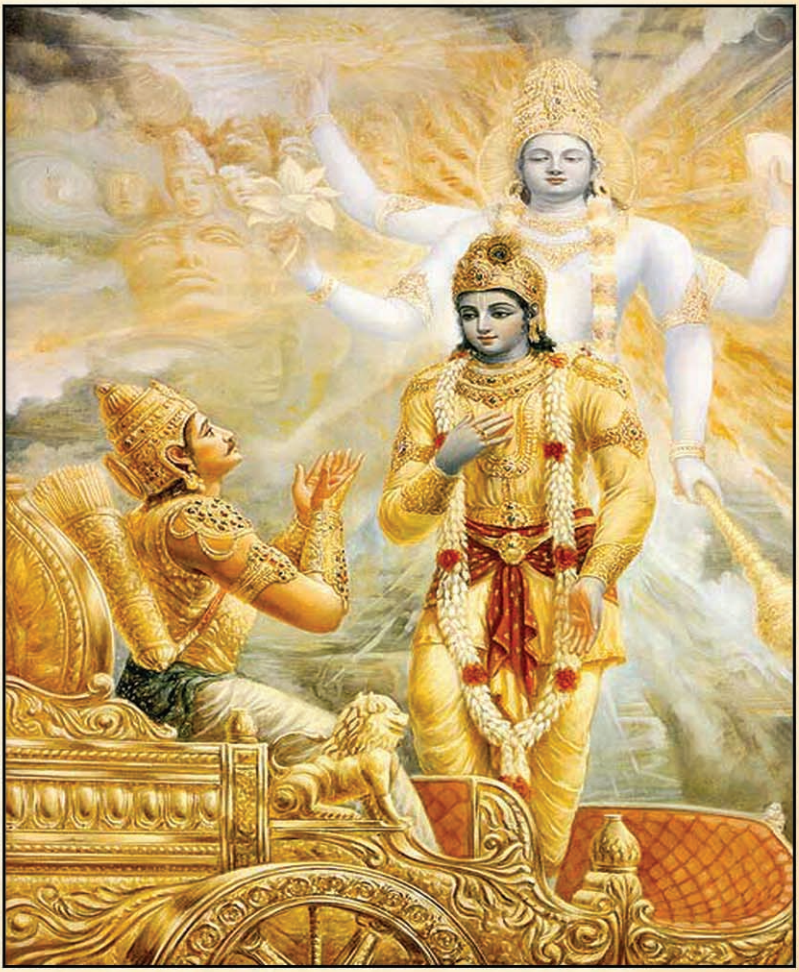

भगवद् गीता का सार

तटवर्ती वीर राघव राव

भीमावरम - 534201.

Ph: 9440309812

email : balajipyramid.bvrm@gmail.com

Rs.160/-

अनुक्रमणिका

1. क्या भगवद् गीता में आराधना सिखाई गई है? या आत्म ज्ञान? 3
2. ज्ञान का मतलब क्या है? 16
3. क्या ईश्वर सगुण है या निर्गुण? 18
4. मैं मूर्ति हूँ भगवद्गीता में कही नहीं कहा 23
5. भगवान ने कैसे 'समर्पण' करने को कहा ? 27
6. 'ईश्वर और जो ईश्वर के द्वारा शिक्षित है इसके बारें में सोचो!' 30
7. भगवद् गीता के अनुसार आराधना दो प्रकार की होती है! 34
8. भगवान ने कहा 'सब एक हैं!' 39
9. 'उद्धरेदात्मानात्मानम्' का कारण 44
10. भगवान ने कहा योगी बनों, भोगी नहीं 46
11. भगवद् गीता के अनुसार योगी कौन है? भोगी कौन है? 53
12. भगवान के पसंदीदा कौन हैं? 54
13. भगवद् गीता के अनुसार गोविंदा! गोविंदा कहना है या गोविन्द के साथ रहना है ? 58
14. भगवान तक कैसे पहुंचना है? 63
15. भगवद् गीता कठिनाइयों और समस्याओं के बारें में 65
16. भगवद्गीता में पुनर्जन्म के बारें में! 74
17. भगवद् गीता में कर्म के बारें में! 82
18. भगवद् गीता सोचने के लिए नहीं - अनुभव करने के लिए है! 98
19. भगवद् गीता में युग के अंत के बारें में! 100
20. भगवद् गीता में जीव-हिंसा के बारें में! 105
21. भगवद् गीता के अनुसार मानव भोजन शाकाहार या मांसाहार ? . 114
22. भगवद् गीता का अर्थ समझने के लिए 118
23. भगवद् गीता के अनुसार ज्ञानी और अज्ञानी 121
24. ब्र्मर्षि पत्री जी के सत्य वचन - 1 126
25. पिरामिड ध्यान के 18 आदर्श सिद्धांत 127

क्या भगवद् गीता में आराधना सिखाई गई है? या आत्म ज्ञान?

कई लोग भगवद् गीता का पाठ, श्रवण, अध्ययन और उपदेश देकर भगवान की पूजा करते हैं। वे जिस तरह से चाहते हैं, वैसे ही पूजा कर रहे हैं। कोई पूजा करने वाला, कोई प्रार्थना करने वाला, कोई भजन करने वाला, कोई नाम-व्रत करने वाला, कोई नामस्मरण करने वाला, कोई स्तोत्र गाने वाला, कोई जप करने वाला; वे जिसे पसंद करते हैं उसकी पूजा करते हैं। पर सब हैं भक्त !

और भगवद् गीता के संपूर्ण सार की पूजा करने के लिए क्या भगवान कृष्ण ने विभिन्न प्रकार की पूजा के बारें में सिखाया है? वह स्पष्ट रूप से नहीं है। भगवद् गीता के माध्यम से, दुःख से छुटकारा पाने के लिए 'आत्म ज्ञान' सिखाया।

अर्जुन महा भुज शाली है। जो एक क्षत्रिय योद्धा, शाही वंश का, एक राजा, धनुर्विद्या में कुशल। उन्होंने बहुत सारी वैज्ञानिक विद्याएं सीखीं। उन्होंने अनेक प्रतापी अस्त्र-शस्त्र प्राप्त किए। बहुतों का विजेता रहें। भगवान कृष्ण न केवल एक करीबी दोस्त हैं, बल्कि एक रिश्तेदार भी हैं! जब महान नायक अर्जुन ने युद्ध शुरू होने से पहले कौरव सेना को देखा, तो वह डर से, उदास और कुछ भी करने में असमर्थ थे! भगवान कृष्ण ने आत्म-ज्ञान सिखाया। इस प्रकार उन्होंने आत्मज्ञान की शिक्षा दी और अर्जुन के दुःख को दूर कर कार्योन्मुख बनाया। उन्होंने अपना धर्म निभाया। यह 'भगवद् गीता सार' है।

हालाँकि अर्जुन के पास सब कुछ है, लेकिन आत्म-ज्ञान की कमी के कारण वह पीड़ित है। वह उदास, चिंतित हो गए और एक छोटे बच्चे की तरह बैठ कर रोने लगे। उनके ऐसा व्यवहार करने का कारण यह है कि उनके पास

आत्म-ज्ञान की कमी है। आत्मा से संबंधित ज्ञान का अभाव।

जिस व्यक्ति ने आत्म-ज्ञान प्राप्त कर लिया है उसे 'योगी' कहा जाता है। उन योगियों में सब से महान व्यक्ति को 'योगीश्वर' कहा जाता है। ऐसे सभी योगियों में सबसे महान 'योगीश्वर' कहलाते हैं। भगवान कृष्ण ऐसे ही योगी हैं। यही कारण है कि वह अर्जुन को महान आत्म-ज्ञान सिखाने में सक्षम थे।

आत्मज्ञान न हो तो उसे 'मानव' कहते हैं। आत्मज्ञान हो जाए तो नारायण कहलाते हैं। कितने भी हों, आत्मज्ञान न हो तो कोई भी दुखित होना ही है। एक आत्म-जागरूक व्यक्ति कुछ न होने पर भी हमेशा खुश रहता है। आत्म-ज्ञान वह है जो मनुष्य को सबसे अधिक चाहिए। इसके अलावा भड़कीलापन नहीं। भड़कीलापन दुःख को दूर नहीं करेगा और ज्यादा दुःख बढ़ाएगा। लेकिन आत्म-ज्ञान न केवल दुखों को दूर करता है... यह शाश्वत सुखों का सृजन करता है।

इसलिए भगवान कृष्ण ने दुनिया के लिए अर्जुन के नाम से गीता का उपदेश दिया।अर्जुन को जो सिखाया गया, इसका मतलब है दुनिया को सिखाया गया। मतलब हम सभी को सिखाया गया है।

अगर आप अभी दुनिया को देखें, तो सबके पास सब कुछ है। न अन्न की कमी है और कुछ लोग हजारों करोड़ रुपये से आलीशान घर बना पाते हैं। लेकिन किसी को चैन नहीं है। कोई भी पूर्ण स्वास्थ्य में नहीं है। किसी का भी रिश्ता ठीक नहीं है। यदि परिवार में उचित संबंध नहीं है तो समाज में दूसरों के साथ उचित संबंध कैसे हो सकते हैं? इसलिए किसी के मन में किसी के प्रति प्रेम की भावना नहीं है। जब आप एक-दूसरे को देखते हैं, तो आप एक-दूसरे से नफरत करते हैं। किसी को देखकर ईर्ष्या और अधीरता है। सतर्कता, प्रतिशोध, हर छोटी बात का बदला लेना। इस प्रकार संसार में हिंसा का बोलबाला हो गया है। स्वार्थ बढ़ गया है। वे एक दूसरे को देखना सहन नहीं कर सकते। देशों के बीच, राज्यों के बीच, एक ही राज्य के क्षेत्रों के बीच मतभेद तीव्र होते जा रहे हैं। वे भाइयों की तरह नहीं हैं! भाई भी लड़ रहे हैं। हर तरफ

मायूसी! 'जीवन क्यों?' के स्तर पर मनुष्य जी रहे हैं। हर तरफ उदासी! यह दुनिया की वर्तमान स्थिति है! इसका मुख्य कारण मनुष्य में आत्म ज्ञान का पूर्ण अभाव है ! यदि मनुष्य दुःख से बाहर निकलना चाहता है; ईश्वर द्वारा सिखाए गए आत्म-ज्ञान को प्राप्त करना चाहता है। लेकिन उसकी जगह पूजा की जा रही है। जैसा कि आप देख सकते हैं, वे कई पीढ़ियों से ऐसा करते आ रहे हैं। लेकिन अगर आप गौर करेंगे तो समझ जाएंगे कि किसी के भी दुख से निजात नहीं मिली है। सोचिए अगर आराधना से दुखों का निवारण होता, अगर हटाया जा सकता तो कम से कम थोड़ा कुछ लोग अपने जीवन में दुःख के बिना रह सकते थे। और ऐसा कौन है? अगर आप देखेंगे तो कह सकते हैं कि ऐसा नहीं है। इसका स्पष्ट अर्थ है कि उपासना दुःख का निवारण नहीं है।

भगवान कृष्ण ने जो सिखाया वह आराधना है तो पूरा संसार निश्चय से ख़ुशी से रहता था। क्या सब ख़ुश हैं? नहीं है न! अर्थात वह असत्य नहीं सिखाते! झूठा रास्ता नहीं दिखाते। अगर वह इस तरह सिखाते है तो वह भगवान कैसे हो सकते है? इसलिए, उन्होंने जो उपदेश दिया वह 'पूजा' नहीं थी। जानना चाहिए कि 'आत्मज्ञान' ही है। इसलिए, भगवान द्वारा सिखाए गए आत्म-ज्ञान के बारें में! आत्म-ज्ञान से दुःख का निवारण कैसे हो सकता है? आइए जानते हैं उन बातों के बारें में।

मनुष्य को विशेष रूप से आत्मा के बारें में क्यों जानना चाहिए? आत्म-जागरूकता क्यों प्राप्त करें? आत्मज्ञान हो जाए तो दुःख क्यों नहीं आता? दुःख कैसे दूर होता है? चलो पता करते हैं।

मनुष्य केवल एक शरीर नहीं है। तन, मन, आत्मा... ये तीनों मिलकर ही मनुष्य का निर्माण करते हैं। इन तीनों में 'आत्मा' सबसे महान, सबसे प्रमुख, सबसे महत्वपूर्ण, सबसे शक्तिशाली है। कारण यह है कि यदि आत्मा नहीं है तो शरीर नहीं है और मन नहीं है। इसके अलावा 'शरीर' नश्वर है। लेकिन 'आत्मा' शाश्वत है। इसलिए उस महान 'आत्मा' के बारें में जानना और उसका अध्ययन करना अत्यंत आवश्यक है। अर्थात आत्मा को सम्बन्धी ज्ञान आवश्यक

है। आत्मा मनुष्य में प्रमुख भूमिका है, इसलिए सारा मानव जीवन इस पर निर्भर करता है। अन्यथा कोई वास्तविक जीवन नहीं है। मानव जीवन समाप्त हो जाएगा।

जरा देखो तो! आत्मा नहीं है तो अर्थात आत्मा शरीर से निकल जाती तो शरीर शव बनता है। आंखें देख नहीं सकती, मुंह बोल नहीं सकता। कान सुन नहीं सकते, नाक सूंघ नहीं सकती, हाथ-पैर काम नहीं कर सकते। इसका मतलब है कि इंसान ये सब काम कर सकता है! इसका कारण आत्मा ही है।

इसके अलावा, मनुष्य इंद्रियों के माध्यम से कई सुखों का अनुभव करता है। टी.वी. देख रहा है। वह कई खूबसूरत दृश्य देखता है। उसे मीठी आवाजें और गाने सुनना अच्छा लगता है। वह अच्छी सुगंधों को महसूस करता है। तरह-तरह के स्वादों का लुत्फ उठाता है। क्या यह सब इस वजह से है और अगर आत्मा न हो तो किसी का जीवन साथी तो हो ही नहीं सकता है न? नहीं मिल सकता वो सुख? इसलिए पत्नी या पति न होने पर भी वे जीवन भर दुखी रहेंगे। अर्थात आत्मा ही मनुष्य के सुख का कारण है। दुःख का कारण आत्मा का अभाव है।

इसके अलावा मानव शरीर में श्वसन, पाचन, रक्त संचार और मलत्याग जैसी लगभग दो सौ क्रियाएं आत्मशक्ति द्वारा ही होती हैं। मनुष्य स्वस्थ्य जीवन व्यतीत कर पाता है। यदि आत्मा न हो तो ये सभी क्रियाएं समाप्त हो जाएंगी। आत्मा के बिना मनुष्य भोजन नहीं कर सकता।काट कर पेट में रखने पर भी पचन नहीं होता। आत्मा कितनी महान है? आप समझ सकते हैं कि आत्मा कितना महान है। आत्मा की भूमिका कितनी महत्वपूर्ण है। गीता में आगे आत्मा की महिमा का वर्णन किया गया है।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक :।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत ।। (भ.गी. 2-23)

तात्पर्यः इस आत्मा को न तो शस्त्रों से छेदा जा सकता है और न ही अग्नि इसे भस्म कर सकती है। जल गीला नहीं है, वायु शुष्क नहीं है। अर्थात आत्मा को

ये कुछ नहीं कर सकते, लेकिन ये सभी शरीर को कर सकते है। इससे समझना चाहिए कि शरीर से आत्मा कितना महान है। इतना ही नहीं

न जायते म्रियते वा कदाचि न्नायम भूत्वाभविता वा न भूयं।
अजो नित्य श्याश्वतोयं पुराणों न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।

(भ.गी. 2-20)

तात्पर्य : यह आत्मा न कभी जन्मती है और न ही मरती है। इसके बिना कोई नया जन्म नहीं होता। शरीर मर जाता है, आत्मा नहीं मरती।

इसका अर्थ है कि आत्मा की न तो मृत्यु है और न ही जन्म। हम समझ सकते है कि जन्म लेना और मरना केवल शरीर से ही है। जैसा कि आप देख सकते हैं, सृष्टि में पैदा होने वाली हर चीज मर रही है। जो कुछ बनाया गया है वह गायब हो रहा है। इसका मतलब यह है कि आत्मा इस सृष्टि की किसी भी चीज़ से बड़ी है। मनुष्य चाहता है कि जो कुछ इस सृष्टि में पाया जाता है वह महान हो, वे इसके लिए लालायित रहते हैं और परीक्षा में पड़ते हैं। उन्हें पाने के लिए वे जीवन भर संघर्ष करते हैं। परन्तु 'आत्मा' को महानता का आभास नहीं होता।

वे उस शरीर के बारें में सोच रहे हैं और शोध कर रहे हैं जो लंबे समय तक नष्ट हो जाएगा। अध्ययन किये जा रहे हैं। वे दृश्यमान प्रकृति, जानवरों और अन्य जीवित प्राणियों के बारें में भी अध्ययन कर रहे हैं। लेकिन कोई भी आत्मा का अध्ययन नहीं कर रहा है। शोध नहीं हो रहे हैं। इसलिए 'आत्मा' के बारें में कोई नहीं जानता। 'आत्मा' की महिमा को कोई नहीं समझता। 'आत्मा' कौन है? हमें 'आत्म-ज्ञान' की आवश्यकता क्यों है? 'आत्मा' के बारें में क्यों जानें? चलो पता करते हैं। भगवद् गीता स्वयं कहती है कि 'आत्मा' कौन है।

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मद्यंच भूतानामंत एव च ।। (भ.गी. 10-20)

तात्पर्यः हे अर्जुन ! मैं आत्मा हूँ जो सभी प्राणियों में विद्यमान है। और मैं जीवों का आदिमद्यांत हूँ।

इस श्लोक से यह ज्ञात होता है कि **आत्मा** अदृश्य ईश्वर है जिसे

समस्त मानव जाति प्रेम करती है, जिसकी पूजा करती है, प्रार्थना करती है। इसलिए 'आत्मा' का न जन्म होता है न मृत्यु। असीम शक्ति होती है। यह सब जगह फैला हुआ है। यह सभी में है। सब कुछ आधारित है, महान है, कारण आत्मा ही भगवान है, ऐसे भगवान का अध्ययन करना चाहिए न!

क्या आपको पता नहीं होना चाहिए? लेकिन इंसान ईश्वर यानी आत्मा के बारें में नहीं जानता। यह न जानना ही मनुष्य के दुःख का कारण है। इसलिए हमें आत्मा के बारें में जानने की जरूरत है। आत्मा का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। यानी 'आत्म-जागरूकता' हासिल करना।

खासकर आत्मा यानी ईश्वर की अज्ञानता के कारण दुनिया में मूर्तिपूजा और फोटो प्रार्थना का प्रचलन हो रहा है। यदि वे आत्मा के बारें में जानते, तो वे परिणाम देनेवाला आत्मा की ही आराधना करते है, अर्थात ध्यान ही करते है।

इसके अलावा, यदि आप आत्मा के बारें में जानते हैं, तो आप समझेंगे कि ईश्वर सभी जीवित प्राणियों में, सभी जानवरों में, सभी मनुष्यों में मौजूद है। इसका अर्थ है कि सभी भगवान के रूप हैं। तब मनुष्य अत्याचार, हानि, पीड़ा, हत्या या मांस नहीं खायेगा। इस प्रकार के पाप न करें जो मनुष्य के दुखों का मूल कारण हैं।

हिंसा का अर्थ है अन्य जानवरों, अन्य मनुष्यों को शारीरिक या मानसिक रूप से नुकसान पहुँचाना। यह पाप है। यह पाप दुःख का कारण है। तो दुःख क्यों आता है? क्या कर्म करने से हिंसक कर्म नहीं होते? आप उन चीजों को क्यों कर रहे हैं? क्या ज्ञान के अभाव के कारण ही सब आत्मा के रूप हैं... सब ईश्वर के रूप हैं... सब एक हैं? यदि तुम्हें वह ज्ञान होता तो तुम ऐसा व्यवहार न करते? फिर दुःख तो नहीं होगा ना! अतः स्पष्ट है कि दुःख का कारण ज्ञान का अभाव है।

इसके अलावा, जिन्हें आत्मज्ञान है, जो अपने बारें में जानते हैं, जो समझते हैं, जो सृष्टि की हर चीज़ को ईश्वर का रूप मानते हैं और हर चीज़ से मित्रवत व्यवहार करते हैं। वे एक दूसरे की मदद करते हैं और अच्छा करते हैं।

हर किसी चीज से प्यार करें। सभी के लिए खुशियां लाता है। ऐसा कर्म करना ''पुण्य' है। इससे कभी भी कष्ट नहीं आएंगे और वे हमेशा सुखी जीवन व्यतीत करेंगे। प्रार्थना जरूरी नहीं है। जो प्रसन्न हैं उनके लिए पूजा आवश्यक नहीं है, इसलिए भगवान कृष्ण ने 'आत्मज्ञान' की शिक्षा दी।

अभी तक हमने यही सीखा है कि आत्मा ही ईश्वर है। लेकिन 'आत्मा' के बारें में जानने का एक और रहस्य है। क्योंकि मनुष्य सोचते हैं कि वे दृश्य शरीर हैं। परन्तु वे यह नहीं जान पाते कि वे अदृश्य 'आत्मा' हैं। लेकिन यही असली रहस्य है जिसे इंसानों को जानने की जरूरत है। यही वास्तविक ज्ञान है जिसे मनुष्य को 'आत्मा' के बारें में जानने की आवश्यकता है। अर्थात मुझे यह सत्य जान लेना चाहिए कि मैं 'देह' नहीं 'आत्मा' हूँ।

लेकिन दुनिया में इंसानों की क्या समझ है! 'मैं जिस शरीर के अंदर हूँ वह मेरी आत्मा है, लेकिन वास्तविक सत्य है!' आत्मा मैं हूँ, शरीर मेरा है।

क्योंकि अब तक मनुष्य ने किस आत्मा की उपेक्षा की है, किस आत्मा को महत्व नहीं दिया है, यह नहीं जान पाया कि आत्मा ही भगवान है ! 'वही आत्मा मैं हूँ , शरीर मेरा है।'

आप कैसे जानते हैं कि आत्मा मैं हूँ? इसे समझने के लिए हमें एक सवाल पूछना होगा। क्या हमारे पास अभी भी जन्म हैं? क्या इसका समाधान पहले किया जाना चाहिए? यह कैसे जाना जाता है? थोड़ा विचार कीजियेगा। क्योंकि एक मानव का मतलब है दोनों के संयुक्त ही मानव है। एक है नाशवान 'शरीर' और दो हैं अविनाशी 'आत्मा'।

यदि हमारे और जन्म हों, मौत के बाद केवल आत्मा ही रहता है। इसलिए हम आत्मा बनते है। यदि हमें जन्म नहीं होते तो मरने के बाद जलकर शरीर नहीं रहता है। इसलिए हमें पहले ही यह सवाल पूछना चाहिए कि जन्म है या नहीं ?

लेकिन हमें इस मामले में ज्यादा सोचने की जरूरत नहीं है। कारण यह है कि भगवान ने गीता में यह स्पष्ट कहा है कि हमारे और भी जन्म हुए हैं और हम और भी रहेंगे।

श्लोः जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्भवं जन्ममृतस्य च।
तस्मादपरिहारार्थे न त्वं शोचितु मर्हसि।। (भ.गी. 2-27)

तात्पर्यः- जन्म लेने वाले की मृत्यु अवश्य है और मरने वाले का जन्म अवश्य है।

बिल्कुल आपको इस बात पर दुखी नहीं होना चाहिए। इस श्लोक के माध्यम से भगवान कहते हैं कि जो जन्म लेता है वह मरता है और जो मरता है वह फिर से जन्म लेता है, जिसका अर्थ है कि किसी की मृत्यु नहीं है। अमरत्व के लिए क्यों रोते हो? भगवान ने अर्जुन के माध्यम से करोड़ों लोगों को संदेश दिया है।

क्या वे मर रहे हैं? कौन मरता है? इसका मतलब सिर्फ हमारा शरीर मरता है। हम नहीं कर रहे हैं। क्योंकि हम 'आत्मा' हैं, हम अमर हैं। इसलिए हमें जानना चाहिए कि 'मृत्यु' 'आत्मा' है जब हम पुराने शरीर को छोड़ देते हैं, और 'जन्म' 'आत्मा' है जब हम एक नया शरीर धारण करते हैं। ईश्वर यही है। निम्नलिखित श्लोक में समझाया गया है।

श्लोः वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोपराणि
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा न्यन्यानि संयाति नवानि देहि।
(भ.गी. 2-22)

तात्पर्य :- मनुष्य कैसे अपने पुराने वस्त्रों को त्याग कर नए वस्त्र धारण करता है! साथ ही आत्मा (हम) पुराने शरीर को छोड़कर नया शरीर धारण कर रही है।

आत्मा से सम्बंधित ज्ञान के अभाव से मनुष्य स्वयं ही आत्मा होकर भी उनको मृत्यु नहीं होने पर भी, वह दुखी है कि वह मर जाएगा और उनका परिवार भी मर जाएगा। देखिए दुनिया का हर इंसान मौत से कितना डरता है! मरने से कितना डर लगता है! क्या वह सचमुच मरने वाला है? मर जाऊंगा इसका कोई मतलब नहीं है। लेकिन दुःख इस बात का है कि आप यह नहीं जानते कि 'आत्मा' स्वयं है? क्या आत्मा का ज्ञान नहीं है? इसलिए योगी जो इसे अर्थात 'आध्यात्मिक ज्ञान' जानते हैं, वे मृत्यु से नहीं डरते।

इसलिए 'योगी बताते-बताते मर जाते हैं - भोग मर जाते हैं बताकर' जैसे-जैसे 'आत्म-ज्ञान' बढ़ता है, एक और रहस्य सिखाया जाता है, क्योंकि

पहले हम जानते हैं कि 'आत्मा ही ईश्वर है'। फिर हम जानते हैं कि 'वह आत्मा मैं हूँ' तो यह स्पष्ट है कि इसका अर्थ है 'मैं भगवान हूँ' और यह सृष्टि में एक महान रहस्य है नहीं, 'सत्य' है! इसलिए वेद सत्य 'अहं ब्रह्मस्मि' बोलते हैं। इसका अर्थ है 'मैं भगवान हूँ'। जिनको 'आत्मज्ञान' नहीं है वे इस बारें में क्या जानेंगे? निश्चित रूप से नहीं जानते।

इसलिए जो नहीं जानते कि 'मैं भगवान हूँ' वे सोचते हैं कि मैं एक इंसान हूँ और सोचते हैं कि भगवान कहीं और हैं। अनेक तीर्थ हैं। कई मंदिरों में दर्शन और पूजा की जाती है। लोग मूर्तियों की पूजा कर रहे हैं और गीत गा रहे हैं। वे अपनी इच्छाओं और कष्टों को पूरा न करने के लिए भगवान को दोष देते हैं। भगवान बदले जा रहे हैं, धर्म बदले जा रहे हैं, पूजाएं बदली जा रही हैं। क्या यह सब ज्ञान की कमी के कारण है? यदि आपके पास आत्म-ज्ञान है, तो आप इस तरह का व्यवहार नहीं करेंगे, है ना? श्री वीरब्रह्मेन्द्रस्वामी ने भी यही कहा हुआ था।

'वेदकि वेदकि वेदकि वेसारि वेसारि
अचट निचट लेडटंचु नेंचि
तरचि चूचि तानु तनलोने गनुगोने
कालिकाम्ब! हंस! कालिकाम्ब !'

तात्पर्यः- भगवान के लिए! कहीं खोजते-खोजते, अनेक तीर्थ, अनेक जन्म जैसे काशी, रामेश्वरम, तिरुपति, अनेक नदियाँ, अनेक समुद्र, और अंत में ऊब जाना, यह जानकर कि वह न वहाँ है, न यहाँ है, और कहाँ है? कहाँ है वह इसके बारें में सोचने से अंततः मनुष्य को यह एहसास होता है कि वह अपने आप में है। योगी वेमना गुरु ने भी यही बात कही।

'ब्रह्म मनंग वेरे परदेशमुना लेडु
ब्रह्म मनाग दाने बट्टबायलु
तन्नु तानेरिगिन तानेपो ब्रह्मबु
विस्वादाभिराम विनुर वेम !'

तात्पर्यः- ईश्वर कहीं और नहीं है। रहस्य है! वह परमेश्वर है। यदि आप स्वयं को जानते हैं! वेमना ने 'तुम भगवान हो' कहा है।

जब आप 'आत्म-ज्ञान' प्राप्त कर लेते हैं और जान जाते हैं कि मैं 'आत्मा' हूँ, तो आप जानेंगे कि 'मैं ईश्वर हूँ'! अगर आप समझ गए कि कोई दूसरा भगवान नहीं है! फिर 'प्रार्थना बंद करो और अभ्यास शुरू करो और सब कुछ प्राप्त करो'। 'प्रार्थना बंद करो और अभ्यास शुरू करो। जीवन में अच्छे परिणाम प्राप्त करो'। भगवान 'उन्नत नहीं हैं। जैसा कि उन्होंने सिखाया, वे ऊंचा होने की कोशिश करते हैं '। हीनता की भावना चली गई है और साहस की भावना आ रही है! दुःख दूर होकर सुख का प्रवेश होता है।

यदि आप आत्म-जागरूकता बढ़ाते रहेंगे, तो आप सृष्टि के एक और रहस्य को समझ पाएंगे। इसका अर्थ न केवल 'अहं ब्र्ह्मास्मि' है, बल्कि एक अन्य वैदिक शब्द 'तत्वमसि' भी है। 'तुम वही हो जो मैं हूँ!' यह भी ज्ञात है। 'ममात्मा सर्वभूतात्मा' को जाना जाता है ! इसका अर्थ है कि जो कुछ भी मेरी 'आत्मा' है, वह वही 'आत्मा' है जो सभी में विद्यमान है। इसका अर्थ है कि 'मैं और सब एक हैं' यह सत्य ज्ञात हो गया। यह सत्य ज्ञात हो गया कि केवल मनुष्य ही नहीं, बल्कि सभी प्राणी एक हैं। अर्थात 'मैं ही सब कुछ हूँ! सब कुछ मैं हूँ!' यह समझ आता है। इस सत्य को समझा जा सकता है कि इस सृष्टि में सभी एक हैं। ज्ञात होता है कि सब कुछ भागवत का ही रूप है।

रत्न भले ही भिन्न हों, सोना एक ही है! घड़े भले ही अलग हों, मिट्टी एक ही है! वस्त्र भले ही भिन्न हों, सूत एक ही है! रूप अलग-अलग होते हुए भी मनुष्य और पशु सब एक हैं! यह समझ आता है। इसका मतलब है कि सब कुछ मैं ही हूं। तब उसका आचार-विचार, आचरण सब बदल जाएगा। तब तक जो इस भाव से जीता और व्यवहार करता था कि सब कुछ अलग है, वह जीता है कि सब एक हैं।

तब राग और द्वेष नहीं रहेगा। वह किससे घृणा करता है जबकि कारण उसका अपना है? जो किसी से नफरत करता है वह खुद से नफरत करता है! इसलिए वह किसी से द्वेष नहीं करता। किसी से विशेष स्नेह नहीं है। क्योंकि

सभी कारण एक ही हैं! अगर वे अलग हैं, तो स्नेह में अंतर है।

मेरा नहीं, किसी और का नहीं। लेकिन जब सब कुछ एक जैसा हो तो कोई फर्क नहीं पड़ता! फिर किसी को सताता नहीं, क्योंकि जिसको भी सताता है, अपने को सताता है! जो कोई भी धोखा देता है, लूटता है, अपमान करता है, उपहास करता है, वह स्वयं करने जैसा है! वह यह समझ गया। क्या वह बातें करता है? क्या तुम नहीं करोगे? साथ ही किसी और से ज्यादा बनने की कोशिश नहीं करता। हावी होने की कोशिश नहीं करता।

इंसान नहीं, जानवर नहीं। वह जानता है कि सभी जीव क्या हैं। फिर वह न तो कुछ सताता है और न ही कुछ खाता है। लेकिन यह सब करना आत्मज्ञान की कमी के कारण है! क्या इसलिए नहीं कि आप आत्मा के बारें में नहीं जानते? उस ज्ञान के बिना, यह सोचकर कि सब कुछ अलग है, यह सोचकर कि वह अलग है, वह सृष्टि के विपरीत काम कर रहा है। वह पाप कर रहा है। वह पीड़ित है। वह उदास महसूस कर रहा है। और अगर आत्म-ज्ञान है, तो यह दुःख मौजूद नहीं होगा, है ना? यदि दुःख नहीं है, तो दुःख से छुटकारा पाने के लिए पूजा करने की कोई आवश्यकता नहीं है!

जब यह ज्ञान अभी सिद्ध होगा तो एक और रहस्य प्रकट होगा। वास्तविक सत्य प्रबुद्ध है। इस मूल रचना में और कुछ नहीं है। केवल भगवान है! परब्र्म एक है! हालाँकि सब कुछ अलग लगता है! केवल ब्र्म है! यह ज्ञात है। इसलिए उन्होंने कहा 'एकं सत विप्राबहुदावदंती'। अर्थात 'सत्य' ही एक है! अर्थात ईश्वर एक है! लेकिन लगता है बहुत सारे हैं।

गीता में भी यही कहा गया है।

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।

विष्टाभ्याहमिदं कृत्स्न मेकांशेन स्थितोजगत।। (भ.गी. 10-42)

तात्पर्य :- अर्जुन! अब तक समझाए गए इस विशाल ज्ञान से आपको क्या लाभ हुआ? यह जानो कि मैं इस संसार में व्याप्त हूँ। उपरोक्त श्लोकों के माध्यम से कहा गया है कि स्वयं ईश्वर के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। तो उसे इस सृष्टि का असली रहस्य कब पता चलेगा।

उसके लिए पृथ्वी पर जानने के लिए और कुछ नहीं है। ऐसे व्यक्ति को दोबारा धरती पर आने की जरूरत नहीं पड़ेगी। आओ भी मत! इसे 'निर्वाण' कहते हैं। 'मोक्ष' के नाम से भी जाना जाता है।

जब तक हम इस रहस्य को नहीं जानेंगे, तब तक हम कितना भी जान लें, कितना भी पा लें, हमें बार-बार पृथ्वी पर आना ही पड़ेगा! पैदा होना पड़ेगा! पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने के लिए!

इसलिए कहा जाता है कि संसार में ? प्रकार की भक्ति होती है। उनमें से पहला है 'अधमभक्ति' जिसका अर्थ है वासना से पूजा करना।

दूसरी है 'उत्तमभक्ति' जिसका अर्थ है बिना इच्छा के पूजा करना।

तीसरी है 'अनन्याभक्ति' जिसका अर्थ है यह जानकर ध्यान करना कि ईश्वर ही सब कुछ है।

चौथी, 'परिपूर्णभक्ति' का अर्थ है कि कोई अलगाव नहीं है, कुछ भी अलग नहीं है। ज्ञान प्राप्त करने के लिए कि सब कुछ भगवान है।

सृष्टि के इस रहस्य को जानकर भगवान कृष्ण ने भगवद् गीता के माध्यम से अर्जुन को 'आत्मज्ञान' की शिक्षा दी। इसके अलावा, आराधना नहीं सिखाई है। अगर भगवान ने आराधना कि शिक्षा दी होती तो गीता में ही आराधना करने का तरीखा बताया होता। और गीता में कहीं पूजा पद्धति है क्या? संकल्प से प्रारंभ करते हुए अष्टोत्रम कैसे करें? कैसे करं। सहस्रार? कैसे करें अभिषेक? धूप कब जलानी चाहिए? आरती कैसे दें? मंत्र पुष्प कैसे कहें? गीता में कहाँ हैं? नहीं है न! भगवान को कैसे निवेदन करना, खिलाना, जगाना, सुलाना ऐसी सेवा की विधियां गीता में नहीं है ना? और यदि उपासना ही दुःख निवारण का उपाय है, तो यह सब भगवान ने गीता में ही बताया है न? नहीं, यह स्पष्ट समझ में आता है कि गीता में भगवान जो सिखाते हैं वह 'आत्मज्ञान' है, न कि 'आराधना'।

लेकिन इस बात को न समझ पाने और प्रभु के बताए हुए 'आत्मज्ञान' को न समझ पाने के कारण सब लोग पूजा, अर्चना और हौसला अफजाई कर रहे हैं। और परमेश्वर जो कहता है वह एक बात है, मनुष्य जो करता है वह

दूसरी है। और मानवीय पीड़ा कैसे मिटेगी?

वहां समस्याओं के बिना कैसे? क्या यह बिना दुःख के होगा? क्या इसका मतलब यह नहीं होगा? इसलिए इस दुनिया में आराधना का मार्ग आराधना है और दुःख का मार्ग दुःख का। यही प्रस्तुत मानव जीवन है। समाज का तरीका है। भगवान ने सिखाया 'आत्मज्ञान, आराधना नहीं' है। यह सब उपदेश दुनिया के लिए है, अर्जुन के दुःख निवारण के लिए है।

और यदि आप श्री कृष्ण के ज्ञान को समझना चाहते हैं, तो यह उन लोगों द्वारा नहीं समझा जा सकता है जो भौतिक अवस्था में हैं। यह उन लोगों के लिए मायने नहीं रखता जो मन की स्थिति में हैं। यह उन लोगों द्वारा भी नहीं समझा जाता है जो मन की स्थिति में हैं। लेकिन जो 'आत्मा' की स्थिति में पहुंचेंगे, वे स्पष्ट समझेंगे।

और आत्मा की स्थिति तक पहुँचने के लिए क्या करना चाहिए? तरीकें दो हैं। अप्राकृतिक मांस नहीं खाना चाहिए। प्रकृति की प्राकृतिक तैयारी, जिसमें पंच भूत शामिल हैं, को 'सत्व सखा भोजन' के रूप में लिया जाना चाहिए। दो 'श्वास पर ध्यान' करना चाहिए।

ध्यान करना आत्मा पर ध्यान लगाना है अर्थात परमात्मा पर ध्यान लगाना है! तो जो लोग इन दोनों का पालन करते हैं वे धीरे-धीरे आत्म स्थिति में पहुंचेंगे। वे समझेंगे कि भगवान कृष्ण ने क्या कहा।

अगर इन दोनों का पालन नहीं किया गया तो भगवद् गीता कभी नहीं समझी जाएगी। श्रीकृष्ण ने जो कहा वह हम नहीं समझेंगें। 'आराधना' को ही महान समझते है। आत्मज्ञान कि परवाह नहीं करते। वे दुःख में ही रहते हैं। इसलिए दुःख से छुटकारा पाने के लिए, मांसाहार का त्याग करना चाहिए, ध्यानाभ्यास करना है और आत्मज्ञान को प्राप्त करना चाहिए।

एक सुंदर फूल अगले दिन मुरझा जाएगा, धागा मुरझाता नही है और वही रहता है। इसी तरह, दुनिया में सब कुछ क्षय और विलुप्त होने के अधीन है। कुछ भी स्थायी नही है। लेकिन केवल भगवान ही शाश्वत है। इसलिए भगवान को पाना चाहिए। ईश्वर का ज्ञान (आत्मज्ञान) प्राप्त करना चाहिए।

ज्ञान का मतलब क्या है?

ज्ञान दो प्रकार का होता है (1)मिथ्या ज्ञान (2) सत्य ज्ञान

मिथ्या ज्ञान (असत्य) अर्थात शरीर से संबंधित ज्ञान। सत्य ज्ञान का अर्थ है आत्मा का ज्ञान।

दुनिया में झूठा ज्ञान बहुत है। क्योंकि उन्हें केवल देह ज्ञान ही मालुम है। उसी ज्ञान से ही अभिनय कर रहे है और जी रहे है। ज्यादा लोग वही सिखा रहे है। सत्यज्ञान अर्थात 'आध्यात्मिक ज्ञान' बहुत कम लोग जानते हैं! शिक्षक भी कम हैं! लेकिन भगवान कृष्ण ने भगवद् गीता में जो कुछ भी सिखाया वह 'आत्मज्ञान' है।

सब गीता का पाठ कर रहे हैं। सीखा रहे है, सुन रहे है, लेकिन जो भगवान् ने सिखाया वह किसी कि समझ में नहीं आ रहा है। क्योंकि सभी लोग देह ज्ञान से ही जी रहे है। वे सोचते हैं कि वे शरीर हैं। देह सुख, देह श्रृंगार। शरीर की सुंदरता, शरीर की समरूपता, शरीर का स्वास्थ्य। केवल शारीरिक सुख की तलाश में, महत्व दे रहा है। वे यही चाहते हैं।

क्योंकि सबको शरीर का ही ज्ञान है, सब शरीर को देखते हैं और समझ रहे है कि सभी अलग-अलग हैं। सभी जानवर और जीव अलग-अलग हैं। ऐसे ही अभिनय कर रहे है। शरीर को देखकर वे समझ रहे है कि वे अलग अलग के जाति, धर्म, क्षेत्र, और देश के है। अलग समझने से सभी के ऊपर द्वेष और स्वार्थ दिखा रहे है। लड़ रहे है। युद्ध कर रहे है। अंतिम में दुखी हो रहे है। लेकिन अगर आपको आत्मा-ज्ञान है, आप जानते है कि आत्मा ही ईश्वर है और एक ही आत्मा सभी में मौजूद है, तो मनुष्यों का व्यवहार ऐसा

नहीं होगा। ऐसा लगता है कि सब कुछ एक ही है।

इसलिए जो देह ज्ञानी है वे सभी मानव निर्मित कर्मकांडों का अवलोकन कर रहे है। कर्मकांड को ही महत्त्व दे रहे है। लेकिन आत्मज्ञान जो हैं वे कर्मकाण्ड से अधिक ईश्वर द्वारा स्थापित धर्म को महत्व देते हैं।धर्म के अनुसार जी रहे है।

इस संसार में कर्मकांड करने वाले सभी संकट में हैं।

वहीं ही नहीं, बल्कि वे भगवान से उन्हें बचाने की प्रार्थना कर रहे हैं। पूजा कर रहे हैं। लेकिन जो धर्म का पालन करते हैं वे स्वतः ही बच जाते हैं और सुखी हो जाते हैं। इसलिए उन्होंने कहा 'धर्मोरक्षति रक्षितः'।

लेकिन उन्होंने 'धर्मो रक्षति रक्षितः' नहीं कहा। इसलिए सच्चा आत्मज्ञान प्राप्त करो। भगवान कृष्ण द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण करें। और यदि आत्मा का ज्ञान जानना है तो आत्मा की शरण लेनी पड़ेगी। आत्मा को पकड़ना है। और अंतरात्मा की शरण लेने के लिए! अन्तर्मुखी बनना चाहिए। यानी ध्यान करना चाहिए। 'आत्म ज्ञान' अर्थात 'सच्चा ज्ञान' प्राप्त करो।

जानिए 'भगवान का धर्म मानव प्रथाओं से महान है'।
'माया में रुचि बढ़े तो भगवान में रुचि घटे।
माया से द्वेष बढ़े तो भगवान में रुचि बढ़े'।

क्या ईश्वर सगुण है या निर्गुण?

बहुत से लोगों को संदेह है। कोई कहता है कि वह सगुण है, कोई कहता है कि वह निर्गुण है, और कोई कहता है कि वह सगुण का एक रूप है। और निर्गुण भी कहते हैं।

संसार में अनेक लोग उन्हें सगुणरूप मानते हैं। सगुणोपासना का अर्थ है रूप की पूजा करना। जो लोग सोचते हैं कि वे निर्गुण हैं, वे भी सगुणोपासना कर रहे हैं, बता रहे हैं और प्रोत्साहित कर रहे हैं, यह सोचकर कि निर्गुणोपासना कठिन है। अगर आप दुनिया को इस तरह देखेंगे, तो आप सगुणोपासना को देखेंगे।

और भगवान सगुण हैं या निर्गुण? यदि आप देखते हैं कि, भगवद् गीता में, भगवान ने कहा कि वह निर्गुण हैं। निर्गुणोपासना करने की बात भी कही थी। यह भी कहा जाता है कि जिन लोगों ने निर्गुणोपासना का अभ्यास किया है, वे ही उन तक पहुँच सकते हैं और मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। निम्नलिखित श्लोक में बताया गया है कि वह कौन है।

'अहमात्म गुडाकेशा सर्वभूताशय स्थित :।
अहमादिश्च मद्यंच भूतानामन्त एवच।' ।। (भ.गी.10-20)

तात्पर्यः- हे अर्जुन! मैं समस्त प्राणियों में निवास करने वाली आत्मा हूँ। मैं हूँ और मैं जीवों का आदि और मध्य हूँ। अर्थात मैं प्रत्यक्ष रूप नहीं हूँ। मैं अदृश्य 'आत्मा' हूँ।

यह कहा गया था। क्या आत्मा एक गुण नहीं है? अर्थात भगवान सगुण है ना? इतना ही नहीं, जो लोग स्वयं को सगुण का रूप मानते हैं, उन्हें

भी मूर्ख कहकर संबोधित किया जाता है। भगवद् गीता से निम्नलिखित श्लोक आइए देखते हैं।

'अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।

परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमं ।। ' (भ. गी.7-24)

'मूर्ख' जो मेरी प्रकृति को अविनाशी, सर्वोच्च, प्रकृति की सर्वोच्च सुंदरता के रूप में नहीं जानते हैं। वे मुझे एक अवैयक्तिक व्यक्ति के रूप में सोचते हैं जिसने पाँच भौतिक शरीर प्राप्त किए हैं। इसके अलावा उन्होंने यह भी-

'अवजानन्ति मां मूढ़ा मानुषीम तनुमाश्रितं।

परं भावमजानन्तो मां भूतमहेश्वरं।।' (भ. गी. 9-11)

तात्पर्यः- मूर्ख जो मेरे देवत्व को नहीं जानते हैं, यद्यपि मैं समस्त प्राणियों का नियुक्तकर्ता हूँ, फिर भी उन्होंने यह समझकर मेरा अपमान किया कि मैंने मानव शरीर धारण किया है।

इस प्रकार भगवान ने निराकार होने का दावा किया लेकिन भौतिक होने का दावा नहीं किया। और जो लोग 'साकार' समझते है, ये भी बताया गया है की वे लोग उन्हें अपमान कर रहे है।

और अगर वे साकार नहीं है तो वह आकृति कौन है जो प्रकट होती है। प्रश्न उठता है कि वह दृश्य रूप कौन है ?

उन्होंने यह भी अगले श्लोक के माध्यम से कहा।

'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोपराणि।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णा न्यन्यानि संयाति नवानि देहि।।' (भ.गी.2-22)

तात्पर्य :- कैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को छोड़कर नए वस्त्र धारण करता है! इसी प्रकार, इसी प्रकार शरीर कि आत्मा पुराने शरीर को छोड़कर दूसरा नया शरीर धारण करती है।

इसके अनुसार, दृश्य रूप को 'उसका शरीर लेकिन उसे नहीं' के रूप में समझा जाता है। उन्होंने स्वयं कहा कि यह भगवान (आत्मा) द्वारा पहने गए वस्त्र की तरह है। इस वाक्य की बहुत सावधानी से व्याख्या की जानी चाहिए।

'वह है लेकिन वह नहीं है' इसका बहुत अर्थ है। इसका अर्थ है कि हमें उसे छोड़ देना चाहिए। हम उस रूप की पूजा कर रहे हैं जो उसका नहीं है। हम उसे भूल गए हैं। और उसे ऐसा शरीर क्यों धारण करना पड़ा? उसने संसार के कल्याण के लिए और धर्म की स्थापना के लिए वह रूप धारण किया।

उन्होंने स्वयं कहा कि यह शरीर उस वस्त्र के समान है जिसे हम पहनते हैं। यही बात आगे के श्लोक में कही गई है।

परित्राणायसाधूनां विनाशाय च दुष्कृतां
धर्म संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ! (भ.गी.4-8)

तात्पर्यः- संतों की रक्षा के लिए, दुष्टों का नाश करने के लिए, धर्म की स्थापना के लिए मैं हर युग में जन्म लेता हूं।

इसका अर्थ है कि भगवान, जो आत्मा है, संसार के कल्याण के लिए शरीर धारण करता है। इसके अलावा, मैंने ऐसे कई जन्म लिए। उन्होंने यह भी कहा कि उन्होंने कई शरीर पहने हैं। माना अनेक जन्मों में से एक है अर्थात अनेक शरीरों में से एक है। इसका मतलब है कि हम जान सकते हैं कि यह उनके द्वारा पहने जाने वाले कई परिधानों में से एक है। आइए निम्नलिखित श्लोक को देखें जो कहता है कि मैंने कई जन्म लिए हैं।

'बहूनि में व्यतीतानि जन्मानि तवचार्जुन ।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वम् वेत्थ परन्तप ।।' (भ.गी.4-5)

तात्पर्य :- हे अर्जुन! आपके और मेरे अब तक कई जन्म हो चुके हैं। लेकिन मैं उन सभी को जानता हूं, लेकिन तुम नहीं।

अर्थात यहाँ स्पष्ट कहा गया है कि भगवान ने अनेक जन्म लिए। उन जन्मों में से एक श्री कृष्ण का हैं लेकिन यही वह शरीर है जो उसने इस जीवन में धारण किया था।

इससे हमें यह समझ में आता है कि जैसे हम प्रतिदिन वस्त्र बदलते हैं, वैसे ही प्रत्येक जन्म में हमारा शरीर बदलता है। तो हर जन्म में उसका शरीर बदल रहा है लेकिन वह नहीं बदल रहा है। क्योंकि वह बदलता नहीं है। उसके पास कोई बदलाव नहीं है। कारण यह है कि वह अनादि, चिरस्थायी, बिना जन्म या

मृत्यु के है। इसलिए, हमें पता होना चाहिए कि जो मौजूद है वह उसके वस्त्र की तरह है, वह नहीं है।

इसका अर्थ है कि हम वस्त्र बदलने की शरण ले रहे हैं परन्तु अपरिवर्तनशील सनातन परमात्मा (आत्मा) की नहीं। इसका अर्थ है कि व्यक्ति को रूप की 'आत्मा' का सहारा लेना चाहिए न कि रूप का। यदि आप 'आत्मा' की शरण लेते हैं, तो यह भगवान की शरण लेने जैसा है!

और वह कौन है? अगर आप फिर से पूछें! वह 'आत्मा' है। वह सभी जीवों का अंतरात्मा है। निराकार, अविनाशी। वह इंद्रियों के लिए अदृश्य है। उसके बारें में जानना ठीक नहीं है। वह शाश्वत है। उनके द्वारा कहा गया था कि वह सब कुछ व्याप्त है।

उन्होंने आगे कहाः-

'ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते ।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवं।।' (भ. गी. 12-3)
'संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः।।' (भ. गी. 12-4)

तात्पर्यः- वह जिसके पास सभी इंद्रियां हैं और इंद्रियों के बराबर है, जिसके पास सभी जीवित प्राणियों के लिए इच्छा है, जो 'अक्षर पर ब्रह्म' (आत्मन) का ध्यान करता है जो अवर्णनीय है, इंद्रियों के लिए अगोचर है, अकल्पनीय, अचल है, शाश्वत और सर्वव्यापी।

प्राप्त करना अर्थात भगवान को पाना है! यानी जुड़ना है! व्यक्ति को उसका ध्यान करना चाहिए जो इंद्रियों के लिए अदृश्य है। यह स्पष्ट समझ में आता है कि इंद्रियों से यह संभव नहीं है। इसका अर्थ है इंद्रियों का उपयोग न करना। अर्थात इन्द्रियों से परे की स्थिति में पहुँचना। वह मार्ग विश्वास पर ध्यान है। अर्थात ध्यान के द्वारा ही ऐसे निर्गुण, निराकार भगवान को प्राप्त करने का और कोई उपाय नहीं है।

लेकिन क्या ईश्वर सगुण है? निर्गुण? तर्क करने की कोई जरूरत नहीं है। इसमें कोई शक नहीं है। स्वयं भगवान ने स्पष्ट कहा है कि वे निर्गुण हैं।

साथ ही उपरोक्त श्लोकों में निर्गुणोपासना करने को भी कहा है। इसलिए 'निर्गुणोपासना ईश्वर की पूर्ण पूजा है, मुक्तिदायक पूजा जो परिणाम देती है' और सभी 'सगुण पूजा' निष्फल हैं।

इसे तृप्ति देने वाली पूजा के रूप में समझा जा सकता है। लेकिन कई लोग कहते हैं कि 'निर्गुणोपासना' आम लोगों के लिए कठिन है और हर कोई 'सगुणोपासना' नहीं कर सकता। वे मुझे ऐसा करने के लिए कह रहे हैं। वे प्रोत्साहित कर रहे हैं। लेकिन यह जान लेना चाहिए कि बिना परिणाम के जितनी भी पूजाएं की जाएं, वे व्यर्थ होती हैं। यदि यह कठिन भी हो तो भी ईश्वर द्वारा सिखाई हुई 'निर्गुणोपासना' करनी चाहिए, जो फल देती है। 'मुक्ति' प्राप्त करने के लिए।

और 'निर्गुणोपासना' क्या है? कैसे करना है यह कोई नहीं कहता। कहा जाता है कि निर्गुणोपासना कठिन है। लेकिन यह कैसे करना है यह कोई नहीं बताता। लेकिन ब्रह्मर्षि सुभाष पत्री जी ने हमें निर्गुणोपासना, ईश्वर की पूजा दी है, जिसका अभ्यास एक आम आदमी भी करता है। वह तरीका है 'श्वास पर ध्यान' इसलिए जो कोई भी इस ध्यान को करता है वह न केवल अहंकार में सांसारिक समस्याओं से मुक्ति पाता है, बल्कि सर्वोच्च भगवान में शाश्वत मोक्ष भी प्राप्त करता है।

पता लगाना। ईश्वर निर्गुण हैऔर सगुण नहीं। सगुण पूजा सही तरीका नहीं है। निर्गुणाराधना सही है। इसका अर्थ है 'ध्यान ही ईश्वर की सच्ची पूजा है', अंतर्मुखी 'भगवान' यानी 'आत्मा' की पूजा करने के लिए व्यक्ति को अंतर्मुखी होना चाहिए! यानी ध्यान करना होगा! कोई दूसरा रास्ता नहीं है। तो आइए हम सब ध्यान करें। आइए हम प्राप्त करें मुक्ति।

'ध्यान सांस पर ध्यान है'।

"मैं मूर्ति हूँ" भगवद्गीता में कही नहीं कहा

मूर्ति ही ईश्वर है, यह विश्व में व्यापक मान्यता है। इसलिए केवल मूर्ति को ही पवित्र माना जाता है। वे मूर्ति के पास ही पवित्र रहते हैं। और कुछ भी पवित्र नहीं माना जाता है। वे ऐसे कार्य करते हैं जैसे कि दुनिया में एक मूर्ति के अलावा और कुछ भी भगवान नहीं है।

मूर्ति का ही सम्मान होता है। अब कुछ भी सम्मान नहीं है। वे मूर्ति की सेवा करते हैं और अन्य प्राणियों और जानवरों पर अत्याचार करते हैं। वे मूर्ति की पूजा करते हैं और उसका आनंद लेने की कोशिश करते हैं। दूसरों को अपमानित और आहत किया जाता है। मूर्ति को ही महान माना जाता है। बाकी सब को कम दृष्टि से देखा जाता है। उपहार केवल मूर्ति को चढ़ाए जाते हैं, दूसरों को धोखा दिया जाता है और लूट लिया जाता है।

वे ऐसे कार्य करते हैं जैसे कि मूर्तियाँ दुनिया में सबसे बड़ी हैं, कुछ भी बड़ा नहीं है। सोचिए, क्या दुनिया में कुछ भी महान नहीं है लेकिन एक मूर्ति है? क्या यह बहुत अच्छा नहीं है? यानी सब बढ़िया है। सब भागवत के ही रूप हैं ! कारण यह है कि 'दुनिया में ऐसा कुछ भी नहीं है जो भगवान नहीं है, और भगवान के बिना कुछ भी नहीं है' । सब कुछ वही है। और स्पष्ट होने के लिए, मूल वह उनमें से एक है! ऐसा लगता है कि बाकी सब कुछ वहीं है। विचित्र बात यह है कि भगवद् गीता में भगवान कहते हैं कि वे स्वयं हैं। लेकिन वह कहीं नहीं कहता कि वह एक मूर्ति है। लेकिन दुनिया के इंसान ऐसे बर्ताव कर रहे हैं जैसे मूर्ति के अलावा और कुछ भी भगवान नहीं है और मूर्ति ही भगवान है। आइए निम्नलिखित श्लोकों पर एक दृष्टि डालते हैं:-

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशय स्थितः।

अहमादिश्च मध्यंच भूतानामन्त एव च ।। (भ. गी. 10-20)

ताः हे अर्जुन! मैं समस्त प्राणियों में निवास करने वाली आत्मा हूँ। और जीवों का आदि, मद्य और अंत भी मैं ही हूँ।

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरांशुमान।

मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशि ।। (भ. गी. 10-21)

तात्पर्यः मैं आदित्यों में विष्णु, तेजस्वियों में दीप्तिमान सूर्य, मरुत्त नाम के देवताओं में मैं मरीचि, और नक्षत्रों में चन्द्रमा हूँ।

वेदानां सामवेदोस्मि देवानामस्मि वासवः।

इन्द्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना।। (भ. गी. 10-22)

तात्पर्य : मैं वेदों में सामवेद, देवताओं में इंद्र, इंद्रियों में मन और प्राणियों में चैतन्य हूं।

रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेशो यक्षराक्षसां।

वसूनां पावकश्चास्मि मेरुश्शिखारिणामहम ।। (भ.गी.10-23)

तात्पर्यः- मैं रुद्रों में शंकर, यक्षों और राक्षसों में कुबेर, वस्तुओं में अग्नि, पर्वतों में मेरु हूं।

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थबृहस्पतिं।

सेनानीनामहं स्कन्दस्सनसामस्मि सागर।। (भ. गी. 10-24)

तात्पर्यः हे अर्जुन! पुरोहितों में बृहस्पति हूँ जो श्रेष्ठ है, सैन्य नेताओं में, झीलों में सागर हूँ।

महर्षीणां भृगुरहं गिरमास्म्येकमक्षरम।

यज्ञानां जपयज्ञोस्मि स्थावराणां हिमालयः।। (भ.गी. 10-25)

तात्पर्यः मैं ऋषियों में भृगुमहर्षि हूं, शब्दों में एकाक्षर प्रणव (ओंकारा), यज्ञों में जपयज्ञ, स्थिर पदार्थों में हिमालय।

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः।

गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनि।। (भ.गी.10-26)

तात्पर्यः मैं सभी पेड़ों में अश्वत्थ वृक्ष हूं, देवर्षों में नारद, गंधर्वों में चित्ररथ, सिद्धों में कपिल मुनींद्र हूं।

उच्चैश्रवसमश्वानम विद्धि माममृतोद्भवं।

ऐरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपं।। (भ. गी. 10-27)

तात्पर्यः यह जानो कि मैं घोड़ों में अमृत से उत्पन्न श्रेस्ठ अश्व, बड़े-बड़े हाथियों में ऐरावत और मनुष्यों में राजा हूँ।

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक।

प्रजनश्चास्मि कंदर्पः सर्पाणामस्मि वासुकि।। (भ. गी. 10-28)

तात्पर्यः मैं शस्त्रों में वज्रायुध, दुधारू गायों में कामधेनु, मनुष्यों को उत्पन्न करने वाला दैत्य कामदेव और सर्पों में वासुकी हूँ।

अनन्ताश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहं।

पित्रूणामर्यमा चास्मि यमस्समयमतामहम।। (भ. गी. 10-29)

तात्पर्य : मैं नागों में अनंत, जल देवताओं में वरुण, पितृ देवताओं में अर्यमयु और नियुक्त करने वालों में यम हूं।

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयातामहं।

मृगाणां च मृगेन्द्रोहम वैनतेयश्च पक्षिणा।। (भ. गी. 10-30)

तात्पर्यः मैं असुरों में प्रह्लाद, गणना करने वालों में काल, जानवरों में सिंह, पक्षियों में गरुड़ हूं।

पवनः पवतामस्मि रामश्शस्र भृतामहं।

झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी ।। (भ.गी.10-31)

तात्पर्यः मैं पवित्र लोगों (या तेज) में हवा हूं, शस्त्र धारण करनेवालों में श्री रामचंद्र, मछलियों में मगरमच्छ और नदियों के बीच में गंगा हूं।

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन।

न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम।। (भ.गी. 10-39)

तात्पर्यः- हे अर्जुन! जो समस्त प्राणियों का मूल कारण है, वह मैं ही हूँ। ऐसे ही स्थावर जंगमात्मक कोई वास्तु मुझ से अलग नहीं है।

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।

विष्टाभ्याहमिदं कृत्स्न मेकांशेन स्थितोजगत।। (भ.गी. 10-42)

तात्पर्यः अर्जुन! अब तक बताये गए इस विशाल ज्ञान से तुम्हे क्या लाभ है? यह जानो कि इस पूरी संसार में मैं ही व्याप्त हूँ।

उपरोक्त श्लोकों के अनुसार सब कुछ एक ही है। भगवान कह रहे हैं कि सब कुछ वह है। उन्होंने कहा कि ऐसा कुछ भी नहीं है जो वह नहीं हैं। भले ही वह यह सब कहे, वह सब कुछ नहीं है जो परमेश्वर ने कहा! भगवान ही एक ऐसी मूर्ति है जो कहते नहीं ! मनुष्य व्यवहार कर रहे हैं।

ध्यान दें कि उपरोक्त श्लोकों में मूर्ति का कोई उल्लेख नहीं है। वह है! उनकी मूर्ति को छोड़कर सब कुछ मुझे कहा गया था। मनुष्य को यह समझने की जरूरत है। जब सब कुछ उसी का है, तो सब कुछ पवित्र और आदर के रूप में देखा जाना चाहिए। प्यार करने के लिए सभी की सेवा और रक्षा की जानी चाहिए। सबको दोस्ती दिखाओ। मनुष्य को हर चीज में ईश्वर को देखना चाहिए, किसी का अपमान, घृणा या उत्पीड़न नहीं करना चाहिए। किसी भी जानवर या जीव को दुश्मन नहीं समझना चाहिए।

इसके अलावा, यदि आप भगवद् गीता का पाठ करते हैं और भगवद् गीता को बिना समझे सुनते हैं, तो आप ऐसा कार्य करते हैं जैसे कि केवल एक मूर्ति ही भगवान है और कुछ भी भगवान नहीं है! ऐसा करने वालों के सभी कर्म भगवान के होते हैं। उन्हें पता होना चाहिए कि इससे उन्हें नुकसान होगा। यदि आप यह सब समझना चाहते हैं, तो आपको पहले परमेश्वर की 'आत्मा' को समझना होगा! 'आत्मज्ञान' प्राप्त किया जाना चाहिए! 'आत्मा' को ग्रहण किया जाना चाहिए! 'आत्मा' पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। 'ध्यान' रास्ता है! वे सब कुछ पसंद करेंगे।

भगवान ने कैसे 'समर्पण' करने को कहा?

भगवद् गीता में भगवान की पूजा नहीं की गई है। जब यह कहा गया कि अतिज्ञान ने स्वयं शिक्षा दी थी, तो कुछ भगवान ने पूजा की और कहा, 'फूल, फल और जल चढ़ाया जाता है। है न! मतलब पूजा करना! इसलिए हम उनकी पूजा कर रहे हैं। निम्नलिखित श्लोक उदाहरण देता है कि जैसा प्रभु कहते हैं हम वैसा ही कर रहे हैं।

पत्रं, पुष्पं ,फलं, तोयं योमेभक्त्या प्रयश्चति।
तदहं भक्त्युप्रह्मतमश्नामि प्रयतात्मनः।। (भ. गी. 9-26)

जो कोई भी मुझे भक्तिपूर्वक पत्र, पुष्प, फल या जल अर्पित करता है, मैं उसे प्रेमपूर्वक स्वीकार करता हूँ।

लेकिन यहां भगवान की पूजा नहीं की जाती है। प्रस्तुत, जमा करने का अर्थ है देना। कैसे दें? उन्होंने कहा कि भक्ति के साथ देना। यहां हमें ध्यान से सोचना होगा। और जानना चाहिए।

समर्पण का मतलब देना है, पूजा करना नहीं। किसके लिए प्रस्तुत करना? ईश्वर को। इसलिए पहले यह जान लेना चाहिए कि ईश्वर कौन है।

भगवान कोई मूर्ति नहीं है। फोटो नहीं। वह सब खत्म हो गया है। वह हर चीज में व्याप्त है। वह सबका आधार है। अर्थात सब कुछ वही है। वह सब कुछ है। एक अर्थ में, यह संसार वही है जो वह इस संसार को प्रदान करता है! ईश्वर को प्रस्तुत करता है।

इसलिए इसे दुनिया के सामने पेश किया जाना है। और मूर्ति को नहीं। एक प्रकार से संसार को देना ईश्वर को देने के समान है।

उन्होंने कहा कि यह एक दस्तावेज है, एक फूल है, एक फल है और पानी है। आप जो दे सकते हैं इसका मतलब है कि आपको पैसा, सामान और वाहन नहीं देना है। केवल रत्न और माणिक ही देना जरूरी नहीं है। परमेश्वर ने कहा कि जो कुछ तुम्हारे पास है और जो कुछ तुम्हें दिया गया है वह इस संसार को और संसार में उन लोगों को अर्पित किया जाना चाहिए। इसका मतलब एक ही दस्तावेज, फूल, फल, है।

साथ ही जो दिया गया है उससे ज्यादा महत्वपूर्ण देने की भावना है। और कैसे दें? श्रद्धा से देना चाहिए। भक्ति क्या है? समर्पण भाव से देना। किसे जमा करना चाहिए? आपको खुद को सबमिट करना होगा।

यानी मुझे यह नहीं लगना चाहिए कि मैं दे रहा हूं। ऐसा भाव नहीं आना चाहिए कि जो मेरा है उसे मैं दे रहा हूं। मेरा कहाँ है जब कारण मैं नहीं हूँ? इसलिए बिना यह सोचे कि मैं दे रहा हूं, अपना दे रहा हूं, देना चाहिए। यही सच्ची भक्ति है। तुम कहाँ हो जब कारण सब वही है, सब वही है? आप कहां हैं इसलिए इसे ऐसी भावना के साथ पेश किया जाना चाहिए। भगवान ने कहा कि मैं ऐसा कुछ भी सहर्ष स्वीकार करूंगा।

मैं प्रस्तुत करता हूं कि बहुत से लोग नहीं करते हैं। वे कहते हैं कि मैं अपना दे रहा हूं। कहते हैं मैंने नारियल चढ़ाया, प्रसाद चढ़ाया, उपहार भेंट किए। इतना ही नहीं, उन्होंने जो दिया है, उसके लिए वे इनाम की उम्मीद करते हैं। यह सब उनके कहे के बिल्कुल विपरीत है। जो उसे समझते हैं वे हर फल नहीं चाहते। यह मत सोचो कि मैं दे रहा हूं। वे यह भी नहीं सोचते कि यह मेरा है।

तो इस श्लोक को समझें। भगवान ने कहा। पूजा करने के लिए नहीं। प्रस्तुत करना यानी देना है। इसे किसे देना चाहिए?

ईश्वर का अर्थ है संसार को देना। कैसे देना है भक्ति के भाव से, भक्ति का अर्थ है बिना 'मैं' और "मेरा" भावना से समर्पण भाव से देना है। भगवान ने कहा कि अगर मैं ऐसा करता हूं तो मैं इसे प्यार से प्राप्त करूंगा।

यही बात हम 'श्रीकृष्ण तुलाभारम' के माध्यम से जान सकते हैं।

सत्यभामा ने ऐसा सोचा कि,'मैं भगवान को पैसे और सोने से तौल सकती हूँ। लेकिन चाहे कितने टन सोना डालूं तराज़ू एक इंच भी नहीं हिला। और भगवान निस्चल रूप से वैसे ही है।

लेकिन मैं भगवान स्रक्मिणी देवी को कहां माप सकता हूं। मैं कहाँ हूँ? मेरा क्या है? तुलसीदलम् समर्पण अर्थ है 'दो पत्ते' इस अर्थ में कि यदि दस्तावेज़ प्रस्तुत किया जाता है, तो भी भगवान उसका वजन करेंगे। यहाँ स्रक्मिणी देवी ने केवल तुलसी के पत्ते का समर्पण किया। भगवान, जो टन सोने का वजन नहीं करता है, दो पत्तियों का वजन करता है। यानी सरेंडर कर दिया। यानी प्राप्त हुआ। क्योंकि मैं नहीं हूँ। स्रक्मिणी देवी ने यह कहते हुए भक्ति की भावना से पेश किया, 'मेरे पास मेरा नहीं है'। भगवान ने इसका उत्तर दिया।

तो इस वचन को समझो और जो तुम्हारे पास है उससे कुछ भी उम्मीद मत रखो! यह इसके लायक हो सकता है। बेकार हो सकता है। लेकिन मुझे यह महसूस किए बिना देना होगा कि यह मेरा है। यही ईश्वर का संदेश है।

भगवान ने मूर्ति की पूजा करने के लिए नहीं कहा। दुनिया को देने के लिए कहा। और भी कहा है कि इच्छाओं के साथ नहीं देना चाहिए। बिना अपेक्षा के देने के लिए कहा। जिम्मेदारी की भावना के बिना दें। मुझे देना है उन्होंने मुझसे यह महसूस किए बिना देने को कहा कि मैं दे रहा हूं। क्योंकि भगवान एक ही उपस्थित है और वह जो है उसी का है।

ऐसी भावना से देने की शक्ति 'ध्यान' से ही मिलती है। तो ध्यान करो। भगवान के कहे अनुसार सबमिट करें। स्रक्मिणी देवी की तरह जीवन धन्य करें। 'सत्यभामा' जैसे गर्व के साथ अभिनय मत करो।

'ईश्वर और जो ईश्वर के द्वारा शिक्षित है इसके बारें में सोचो!'

दुनिया में ज्यादातर लोग संसार के बारें में सोच रहे हैं, कमाने के बारें में और जो उन्होंने कमाया है उसका आनंद लेने के बारें में सोच रहे हैं। वह अपनी महानता के बारें में भी सोच रहे है, अपनी महानता को बढ़ाने के बारें में, यानी आर्थिक रूप से धन, पैसा, सामान, वाहन, नौकरी, व्यवसाय आदि। साथ ही सामाजिक तौर पर भी ये सबके बीच नाम और शोहरत पाने की सोच रखते हैं और सम्मानजनक व्यवहार रखते हैं। राजनीतिक रूप से, वे सभी के बीच पद और प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहते हैं। ये महान माने जाते हैं। ऐसी चीजें देखकर उनके रोंगटे खड़े हो जाते हैं। कितनी भी ऐसी चीजें क्यों न हों, वे भगवान से और अधिक मांग रहे हैं। इनकी पूजा नाना प्रकार से की जाती है। लेकिन वह भगवान के बारें में नहीं सोच रहे है।

लेकिन आप कितना भी पा लें, कितना भी पा लें, ईश्वर के बारें में सोचना और जानना बहुत जरूरी है। क्योंकि वे सभी नश्वर हैं, ईश्वर शाश्वत है। इसलिए ईश्वर के बारें में जानने के लिए हमें कुछ प्रश्न पूछने होंगे। इनके जवाब आपको पता होने चाहिए। उनके बारें में अध्ययन करें। अच्छे से सोचो। पूरी तरह समझ लेना चाहिए। अभ्यास किया जाना चाहिए। धन्य है उनका जीवन। इनका जन्म सार्थक है।

खासतौर पर वे जो भगवान से प्रेम करते हैं और भगवान की पूजा को महत्व देते हैं। निम्नलिखित प्रश्न पूछे जाने चाहिए।

1) कहा जाता है कि ईश्वर का अस्तित्व है। लेकिन भगवान क्यों मौजूद है? सोचना चाहिए।

2) कहा जाता है कि मुझे भगवान बहुत पसंद हैं। लेकिन क्या भगवान को हम पसंद है। इसके बारें में सोचना है। क्या करने से और कैसे रहने से भगवान को हम पसंद होंगे। यही सोचना है।

3) वे जो कुछ भी चाहते हैं और भगवान की पूजा और अन्य मामलों में करते हैं। लेकिन क्या परमेश्वर उनकी सराहना करता है जो वे करते हैं? उसके बारें में सोचना!

4) ऐसा माना जाता है कि जो जितनी देर तक पूजा करेगा, वह उतना ही खुश रहेगा। वे पूजा करने को महत्व दे रहे हैं। लेकिन ईश्वर किससे प्रसन्न होता है? उस बारें में सोचना!

5) ईश्वर कैसा है? वह कहां है तुम क्या कर रहे हो? यह विशेष रूप से सोचा जाना चाहिए!

6) हमेशा ईश्वर की तलाश करना लेकिन ईश्वर के बारें में जानने की कोशिश नहीं करना। उसके बारें में नहीं सोच रहा।

7) भगवान को अपनी इच्छाओं के लिए बहुत घंटे के समय व्यय कर रहे है, लेकिन उनके बारें में जानने के लिए केवल एक घंटा भी नहीं दे पा रहे है।

8) वे इतने लम्बे समय से परमेश्वर कि आराधना कर रहे है, लेकिन वे जो परमेश्वर कहते है उस पर अमल नहीं कर रहे है। इसके बारें में सोचो।

9) ईश्वर कब तक महान है? लेकिन ऐसे महापुरुष की वाणी बड़ी महान होती है न? उनका अभ्यास क्यों नहीं करते? आपको अभ्यास करने के लिए सोचना होगा।

10) आप कब तक भगवान से प्रार्थना करते हैं लेकिन आपको उनकी बातों का पालन करने के बारें में सोचना चाहिए।

11) भगवान को इच्छाओं की पूर्ति करने वाले, कष्टों को दूर करने वाले और पापों को क्षमा करने वाले के रूप में पूजा जाता है। लेकिन क्या ईश्वर मनोकामना पूर्ण करने वाला है? कठिनाइयों को दूर करने वाला है? क्या पाप क्षमा किए जाएंगे? ऐसा सोचा जाना चाहिए।

12) ऐसा माना जाता है कि भगवान छोटे-छोटे उपहारों की अपेक्षा रखते हैं। लेकिन मूल जब सारी सृष्टि उसकी है, जब सारी सृष्टि उसकी है उसे सोचना चाहिए कि कौन उसे क्या दे सकता है।

13) ऐसा माना जाता है कि स्तुति और भजन से उस पर विजय प्राप्त की जा सकती है। लेकिन वह किस काम आता है? ऐसा सोचा जाना चाहिए।

14) इसे मंदिरों और भगवान के मंदिरों में रखना माना जाता है। वे वहां पवित्र हैं। लेकिन इस तथ्य के बारें में सोचना चाहिए कि वह सर्वव्यापी है। हर जगह पवित्र होने के बारें में सोचना चाहिए।

15) यदि आप भगवान की पूजा करते हैं, तो वह आपको आशीर्वाद देंगे, यदि आप उनकी पूजा नहीं करते हैं, तो वे क्रोधित होंगे माना लेकिन क्या वह ऐसा व्यवहार करते है? ऐसा सोचा जाना चाहिए।

16) वास्तविक पूजा क्या है? किस प्रकार की पूजा करनी चाहिए? ऐसा सोचा जाना चाहिए।

17) ईश्वर को खोजने से मुक्ति नहीं मिलती! बात यह है कि जुड़ने से ही मोक्ष मिलता है सोचने के लिए।

18) ऐसे बोलता है जैसे वह भगवान को जानता है। वह मूल है इस बारें में सोचें कि आप कितना जानते हैं। यदि हम ऐसा कहते रहें, तो परमेश्वर के बारें में सोचने और जानने के लिए बहुत सी बातें हैं। क्योंकि वह बहुत महान हैं। एक अर्थ में परमात्मा को पूरा जानना असंभव है.. लेकिन थोड़ा जानना चाहिए। आपको उसके बारें में कुछ समझ होनी चाहिए। वह सब कुछ है लेकिन कुछ भी नहीं जानना।

बिना सोचे-समझे किए गए कार्य और पूजा-पाठ व्यर्थ हो जाते हैं। दुःख को मिटाता नहीं, और बढ़ाता है। इसलिए मनुष्य को ईश्वर का चिंतन करना चाहिए।

साथ ही भगवान ने भगवद् गीता के माध्यम से मानव जाति को एक अद्भुत संदेश दिया। मनुष्य के लिए दुःख से बाहर निकलना और सुख से रहना, मानव जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है? मनुष्य क्या करें? जीवन का

उद्देश्य क्या है? अनंत सुख प्राप्त करने के लिए व्यक्ति क्या कर सकता है, इसके बारें में परमेश्वर ने बहुत सी बातें सिखाई हैं। मनुष्य को यह सब सोचना चाहिए। उनके द्वारा सिखाई गई भगवद् गीता हर घर में होनी चाहिए। अध्ययन करना चाहिए। समझने के लिए, अभ्यास किया जाना चाहिए। ख़ासकर सोचिए कि उन्होंने क्या कहा।

क्योंकि परमेश्वर ने जो सिखाया है, उससे बड़ी बातें कौन सिखा सकता है? उन्होंने जो कुछ भी सिखाया वह सचमुच सच था, है ना? इसलिए, भगवान ने जो सिखाया है, उसके बारें में सोचना चाहिए। उसने जो कहा उसके बारें में नहीं सोचना उसे अनदेखा करने जैसा है। यह हमारा नुकसान है। तो इसके बारें में सोचो।

अगर हममें ऐसा सोचने की शक्ति है! 'हल्का शाकाहारी आहार' लेना चाहिए। 'ध्यान' करना चाहिए! इसलिए सभी शाकाहारी हैं। भगवान और उनकी शिक्षाओं के बारें में सोचो।

"बाजार में किसी भी वस्तु की कुछ कीमत चुकानी पड़ती है।
और फिर भगवान को पाने के लिए कितना भुगतान करना है?"

भगवद् गीता के अनुसार आराधना दो प्रकार की होती है!

भगवद् गीता के अनुसार पूजा के दो रूप हैं प्रकार।

(1) देवताराधना (2) भगवदाराधना।

अगर आप देवी-देवताओं की आराधना करेंगे तो वह देवताराधना है। और यदि भगवान कि आराधना करेंगे तो वह भगवदाराधना है।

देवताओं कि आराधना से (उन कि आश्रय से) भोग यानी सुख मिलता है। और भगवान कि आराधना से दुःख से मुक्ति प्राप्त होती है।

यही विषय भगवद्गीता में भी प्रस्तुत किया गया है।

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः।

क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा ।। (भ. गी. 4-12)

मनुष्य जो सद्गुणों के फल की कामना करते हैं वे इस संसार में देवताओं की पूजा करते हैं। क्योंकि कर्मफल सिद्धि इस मनुष्य लोक में शीघ्र होती है।

इसका अर्थ है कि देवताओं के उपासकों को हीन फल प्राप्त होता है, अर्थात कुछ क्षणिक सुख ही प्राप्त होते हैं। इसके अतिरिक्त दुःख से मुक्ति नहीं मिलती अर्थात यह जान सकते हैं कि मुक्ति नहीं हो सकती। लेकिन अब हर कोई अपनी परेशानियों, कष्टों और समस्याओं से मुक्ति पाने के लिए पूजा कर रहा है। हर कोई मुश्किलों से दूर जाना चाहता है। परन्तु उपरोक्त श्लोक से स्पष्ट है कि भगवान की भक्ति करने से उनकी मनोकामना पूर्ण नहीं होगी।

दैवीय पूजा का अर्थ है यज्ञ और मन्त्रों का जाप। इनका उल्लेख वेदों के पूर्व भाग में मिलता है। ये मनुष्य के लिए कुछ अस्थायी सुख लाते हैं।

लेकिन वे एक साथ मिलेंगे। लेकिन उनके दुःख दूर नहीं होते। यानी मुश्किलें दूर नहीं होंगी।

आइए एक उदाहरण देखें। मान लीजिए हम भगवान वरुण का आह्वान करते हैं और वरुण यज्ञ करते हैं। फिर क्या होता है? बारिश होती है। अगर बारिश हुई तो क्या होगा? फसलें अच्छी होती हैं। अगर फसल अच्छी होती है तो क्या होता है? धन का आगमन अच्छा रहेगा। पैसे मिले तो क्या करोगे? धन से सुख प्रदान करते हैं। आनंद लेते हैं। अर्थात ये छोटे मकान को हटाकर भवन का निर्माण करते है। वरना बाइक बेचो और कार खरीदो। घर में ए.सी नहीं तो ए.सी रखना, रंगीन टीवी खरीद लेंगे सोने की वस्तुएं बनती हैं। अच्छे कपड़े खरीद लेंगे। डाइनिंग टेबल, फ्रिज, ग्राइंडर, मिक्सर, वॉशिंग मशीन जैसी चीजें खरीदी जाती हैं। ये सभी कुछ आनंद दे सकते हैं। बस इतना ही, पर उनका शोक अर्थात रोग दूर नहीं होता।

कई लोग कहते हैं कि अगर कोई सुख नहीं है तो क्या जीवन आरामदायक होने के लिए नहीं है? कहा जाता है, लेकिन आपके पास चाहे कितने भी सुख हों, अगर आपको कोई बीमारी है, तो आप उस आनंद का अनुभव नहीं कर पाएंगे, है ना? इसलिए पहले दुःख दूर होना चाहिए। तभी आप सुख का अनुभव कर सकते हैं। दुख में भी सुख से कोई लाभ नहीं। लेकिन दुःख के बिना थोड़ा सा सुख भी अनुभव किया जा सकता है। यदि कारण दुःख है, तो चाहे कितने ही सुखों का अनुभव हो। वे एक ही हैं! न होने पर भी वही है! इसलिए हर कोई जो चाहता है वह सुख नहीं बल्कि सभी समस्याओं, कठिनाइयों और बीमारियों से मुक्ति है। वह मोक्ष भगवान की पूजा करने से नहीं मिलता। इसे हम ऊपर के श्लोक से जान सकते हैं।

और मोक्ष कैसे मिलता है? यह भगवान की पूजा करने से ही आता है। यही बात आगे के श्लोकों में कही गई है।

सर्वधर्म परित्यग्न्य मामेकं शरणं व्रज।

अहम् त्व सर्वपापेभ्यो मोक्षिश्वामि मथुराम्।। (भ. गी.18-66)

तात्पर्यः- सब गुणों को छोड़कर, (वह) केवल मेरा शरण लो मैं तुम्हें सभी पापों से मुक्त कर दूंगा।

'मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य ये पि स्युः पापयोनयः।

स्त्रीयो वैश्यास्तथा शूद्रास्ते पि यान्ति परामगतिम ।। (भ.गी.9-32)

तात्पर्यः- हे अर्जुन! जो पाप जन्म के है, स्त्री, वैश्य, शूद्र, सभी मेरी (आत्मा) शरण सहारे लेते है, वे निश्चय से सर्वोत्तम पद (मोक्ष) प्राप्त करते है।

मनुष्य के लिए रोग, कष्ट, समस्याएं और पाप करना। केवल इसी कारण से यदि रोग और कठिनाइयाँ दूर हो जाती हैं, तो पाप अवश्य ही दूर हो जाते हैं। पापों से छुटकारा पाना कामनाओं के साथ देवताओं की पूजा करना नहीं है। भगवान की पूजा करने का अर्थ है शरण लेना। तभी पाप कटेंगे और संकट दूर होंगे। उपरोक्त श्लोकों में यही कहा गया है।

भगवान ने कहा है कि जिसने भी किसी भी प्रकार का पाप किया हो, यदि वे भगवान की आत्मा की शरण ग्रहण कर लें तो वे अपने समस्त पापों से छूटकर मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। और सहारा कैसे लें। इसका अर्थ है कि व्यक्ति को सभी धर्मों यानी सभी इन्द्रिय धर्मों को त्याग देना चाहिए और भगवान की शरण लेनी चाहिए। कामुक गुण कामुक सुखों की इच्छाएं हैं। अर्थात मन में चल रहे विचारों को छोड़ देना चाहिए। कहा जाता है कि यदि कोई नासमझ अवस्था में ईश्वर यानी आत्मा की शरण लेता है यानी आत्मा पर ध्यान केंद्रित करता है, तो मैं उसे सभी पापों से मुक्त कर दूंगा। इसे ध्यान कहते हैं। यानी जिन्होंने ध्यान किया है, उनके लिए कोई मुश्किल नहीं होगी। अतः दुःख और कष्टों से मुक्ति पाने के लिए 'भगवदराधना' अर्थात 'आत्मार्धन' का ध्यान करना चाहिए।

भगवदराधना का अर्थ है 'ध्यान' जो किसी को भी मुक्ति दिलाता है। इसलिए श्री कृष्ण ने अगले श्लोक में कहा है कि वेदों के पूर्व भाग में वर्णित दैवाराधना को भी छोड़कर भगवदाराधना करने का इस श्लोक में कहा है।

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैं गुण्यो भवार्जुन।

निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान ।। (भ. गी. 2-45)

तात्पर्यः - हे अर्जुन, वेद त्रिगुणात्मक (सभी चीजें) प्रकट करते हैं। आप त्रिगुणों को त्यागने वाले हैं, जो द्वैत से रहित हैं, जो निरंतर शुद्ध सत्त्व में शरण लेते हैं, जो लाभ नहीं देखते हैं। आत्मज्ञानी बनो।

श्री कृष्ण ने कहा कि वेदों में वर्णित यज्ञ-यागादि कर्मों से मिलने वाले सांसारिक सुखों और लाभों को छोड़ दो और निर्गुण की स्थिति को प्राप्त करो जो उन सबसे परे है। द्वैत (सर्दी, सुख-दुःख, मानवमानस) का त्याग होगा। हमेशा सच में जियो। साथ ही, अच्छे और बुरे को पीछे छोड़ दिया है। यानी मन से जुड़ी चीजों को छोड़कर आत्मा और निर्गुण की स्थिति में पहुंचना है।

कारण यह है कि आत्मा हि परमात्मा है, इसलिए आत्मा तक पहुंचना कहा जाता है। इसका अर्थ है कि भगवान की पूजा ही मोक्ष का मार्ग है। लेकिन संसार में मनुष्य इन दोनों अर्थात दैवाराधना और भगवदाराधना को भी त्याग कर दूसरे प्रकार की पूजा अर्थात मूर्ति-पूजा कर रहा है। इसलिए उन्हें कोई फल नहीं मिल पाता और कम से कम सुख तो नहीं मिल पाता। वह आराम से नहीं रह पा रहा है। समस्याएं दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही हैं। दुःख बढ़ता है। बेफिक्री से जी रहे हैं। कारण है भगवान की पूजा करना।

रामायण से हम यह भी सीख सकते हैं कि भगवान की पूजा से मनुष्य को सुख तो मिलता है लेकिन दुःख दूर नहीं होता। दशरथ महाराज के पुत्र को भोग नहीं लगा और उसने पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। उन्हें चार पुत्र प्राप्त हुए। इसका अर्थ है कि त्याग के कारण भोग था। लेकिन उनका दुख दूर नहीं हुआ। क्योंकि वह शोक से मर गये। इस बारें में सोचें कि उस बलिदान के बाद भी उन्होंने अपना दुःख क्यों नहीं खोया? इससे यह स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है कि देवताओं से संबंधित यज्ञ या पूजा केवल सुख दे सकते हैं लेकिन दुःख को दूर नहीं कर सकते।

गीता में जो कहा गया है उसके अनुसार यज्ञ करने से सुख की प्राप्ति होती है। साथ ही, भगवदराधना का अर्थ ध्यान है और यह समझकर मुक्ति प्राप्त करें कि यदि आप ध्यान करते हैं, तो आपको मुक्ति मिलेगी, जैसा कि

श्रीकृष्ण ने वेदों के उत्तरी भाग में कहा था। वशिष्ठ महर्षि ने योगवशिष्ठ में भी यही बात कही है।

देवान्देवयजो यान्ति यक्षा यक्षानव्रजंतिहि

ब्रह्म ब्रह्मयजो यान्ति यदतुच्छम तदाश्रयेत ।।

जो देवताओं का ध्यान करता है, वह देवताओं को प्राप्त करता है। ध्यान करने वालों को यक्षु की प्राप्ति होती है। साथ ही ब्र्ह्मा का ध्यान किया तो ब्र्ह्म की प्राप्ति होगी। इसलिए जो अच्छा है उसे पाने की कोशिश करो।

वशिष्ठों का संदेश 'परब्र्ह्म' है जो सृष्टि में सबसे महान है। वह 'आत्मा' है जिसका ध्यान करने से ही सारे दुःख दूर हो जाते हैं। इसलिए आनंद देने वाले देवताओं की पूजा नहीं है। ब्रह्मण की पूजा करनी चाहिए। मुक्ति पाने के लिए। वह मार्ग है 'ध्यान', ध्यान करने वाले ही दुःख से मुक्त होते हैं। जो लोग भगवान की पूजा करते हैं, वे जिस तरह से करते हैं, उसके आधार पर केवल अस्थायी सांसारिक सुख प्राप्त करते हैं।

परन्तु मूर्ति की पूजा करने वालों का कोई फल नहीं मिलता। यही वह संदेश है जिसे हमें जानना चाहिए। तो जान लीजिए कि गीता में सिर्फ दो तरह की गीता उपासना का जिक्र है। एक है 'दैवाराधना' जिसका अर्थ है यज्ञ और दूसरा है भगवदराधना जिसका अर्थ है 'ध्यान'। तो करो महा 'ध्यान'।

दो एक ही कुर्सी पर नही बैठ सकते। लेकिन अगर कोई उठ जाता है किसी और के पास मौका नही है।
साथ ही, यदि आप ईश्वर पर ध्यान केंद्रित करना चाहते हैं, तो आपको संसार और सांसारिक सुखों पर ध्यान देना होगा।

भगवान ने कहा 'सब एक हैं!'

आमतौर पर दुनिया में देवताओं को अलग माना जाता है। उन्हें लगता है कि वे इंसान हैं। इतना ही नहीं, अनेक देवता हैं। वे सभी अलग भी महसूस करते हैं। साथ ही, जिसे वे पसंद करते हैं वह भगवान है। वह महान हैं। बाकी सब देवता नहीं हैं। उन्हें लगता है कि वे महान नहीं हैं। व्यवहार भी करते हैं।

लेकिन सृष्टि का रहस्य यह है कि सभी देवता एक नहीं हैं, बल्कि हम और देवता एक हैं, आखिर इस सृष्टि के चौरासी लाख जीव-जंतु एक हैं! इस सृष्टि में सब कुछ एक ही क्यों है! सब कुछ भगवान है! वह भगवान है! सब कुछ वही ब्र्म है ! भगवान ब्र्मा!

यही भगवान ने भगवद् गीता में बताया है। 10वें अध्याय में वे विभिन्न श्लोकों के माध्यम से कहते हैं कि मैं ही सब कुछ हूं और अंत में यह कहते हैं।

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।

विष्टाभ्याहमिदं कृत्स्न मेकांशेन स्थितोजगत।। (भ.गी. 10-42)

अर्जुन! यह विशाल ज्ञान आपके लिए क्या अच्छा है? यह जानो कि मैं सारे जगत में व्याप्त हूँ। यह कहा गया था कि वह सब कुछ है। और

मया ततमिदं सर्व जगद व्यक्तमूर्तिना ।

मतानि सर्वभूतानि नचाहम तेह्यविस्थितः ।। (भ. गी. 9-4)

तात्पर्यः- मैं अपने उस प्राकट्य से इस सारे जगत को व्याप्त कर रहा हूँ। सभी जीव मुझमें हैं।

यह कहकर, उन्होंने जो कहा, उसे सिद्ध करने के लिए, अर्जुन को उनके मूल रूप यानी विश्वरूप को दिखाया गया था।

पश्य में पार्थ रूपाणि शतशोथ सहस्रशः।

नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च ।। (भ. गी. 11-5)

हे अर्जुन! मेरे उन रूपों पर विचार करें जो अनेक हैं, दिव्य हैं, विभिन्न रंगों और आकारों के हैं, और असंख्य प्रयोज्यता के हैं। सब वस्तुएँ अपना विराट रूप दिखाकर मुझमें हैं।

सब कुछ मेरे होने के बारें में कहा गया था। इसका मतलब है कि हर कोई कह रहा है कि यह वह है। किन्तु अर्जुन अपने सामान्य नेत्रों से उस रूप को नहीं देख सका। भगवान को यह बताने पर, भगवान अर्जुन को ज्ञान की दिव्य दृष्टि मिली। यही बात आगे के श्लोक में कही गई है।

न तू मां शक्यसे द्रष्टुं नुनेनै व स्वचक्षुषा।

दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य में योगमैश्वरं।। (भ. गी. 11-8)

आप अपनी शारीरिक आंखों से मेरे विश्वरूप को नहीं देख सकते। इसलिए मैं तुम्हें ज्ञान का दिव्य चक्षु प्रदान कर रहा हूं। इससे जुड़ा मेरा योगिक प्रताप देखिए।

इसके अनुसार साधारण आँखों से देखने वालों के लिए सब भगवान के अंश हैं! सब उनके ही रूप हैं! 'सब एक हैं!' यह विषय का कभी भी पता नहीं चलेगा। सब कुछ अलग है, हर कोई सोचता है कि यह अलग है। व्यवहार भी करते हैं। केवल वे ही जो योग अर्थात 'ध्यान' का अभ्यास करते हैं और ज्ञान के दिव्य चक्षु को प्राप्त करते हैं, इस रहस्य को समझ और जान सकते हैं। इसलिए ज्ञान चक्षु प्राप्त अर्जुन ने प्रभु के दर्शन किए उसने उस तरह कहा।

पश्यामि देवांस्तव दे देहे सर्वास्तथा भूतविशेषसंज्ञान।

ब्रम्हाणमीशं कमलासनस्थ मृर्शीस्च सर्वानुरगांश्चदिव्यान।। (भ.गी. 11-15)

भगवन आपके शरीर में (आप में) सभी देवताओं को, और चराचर प्रानिकोटि समूह, ब्रम्हदेव ,समस्त ऋषि , दिव्य नागों, को देख रहा हूँ।

इस प्रकार अर्जुन ने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा और कहा कि सभी उस भगवान के हैं और उनके सभी अंग एक हैं।

अन्नमाचार्य ने भी यही कहा है कि ब्र्म्हं और परब्र्म्हं एक ही है।

यहां तक कि 'शिरिडी साईबाबा' भी कहते हैं, 'सब का मलिक एक है'।

ईशावास्य उपनिषद के एक वाक्य का अर्थ समझाया।

'ईशा वास्यमिदं सत्यम यत्किंचित जगत्यां जगत'

तात्पर्यः- कहा जाता है कि अखिल ब्रह्मांड के जड़ और चैतन्य के सभी रूप ईश्वर से व्याप्त हैं।

'वेद' में भी 'सर्व खल्विदं ब्र्म्म' कहा गया है। अर्थात सब कुछ 'ब्र्म्म स्वरूप' है।

'यीशु मसीह' ने भी कहा 'मेरे पिता, मैं एक हूँ!' जब मैंने कहा कि तुम एक हो, तो मेरा मतलब है कि सब एक हैं।

इस विषय को **श्री त्यागराज जी** ने अपने कीर्तना 'मस्त्गोलरा" में बताया है। इसका मतलब है कि मैंने अपने दिल में खोजा और ध्यान के माध्यम से महसूस किया कि सब कुछ आप हैं! सब कुछ आप हैं! हर कोई एक है!

यह समझना चाहिए कि सभी एक हैं। अर्थात हम उस ईश्वर के स्वस्प हैं। यानी हमें पता होना चाहिए कि हम भगवान हैं। कोई अन्य देवता नहीं हैं। इसलिए उन्होंने कहा 'अहं ब्र्म्मास्मि'।

इसलिए जिन देवताओं की हम पूजा करते हैं वे हम स्वयं हैं। इसलिए हमें 'स्वयं का उत्थान' करना होगा। यह बात केवल उन्हीं को समझ में आती है जिन्होंने ध्यान किया है। यदि हम ध्यान नहीं करेंगे तो हम कभी नहीं समझ पाएंगे। यदि हम इसे बेहतर ढंग से समझना चाहते हैं, तो एक उदाहरण देखें।

हम सभी महान महासागर को जानते हैं। जिसके क्षेत्र में समुद्र है, वे उसे एक नाम देते हैं। कैसे एक ही समुद्र को अलग-अलग नाम दिए जा सकते हैं और अलग-अलग नामों से पुकारा जा सकता है! साथ ही, एक ही 'परब्र्म' को अलग-अलग क्षेत्रों और अलग-अलग धर्मों के लोग अलग-अलग नामों से पुकारते हैं।

तो कुछ कहते हैं 'अल्लाह'। कोई कहता है 'मेरे पिता'। कुछ लोग 'भगवान', 'परब्र्म', 'परमात्मा', 'परमेश्वर', 'निर्माता', 'आदिशक्ति' को विभिन्न नामों से पुकारते हैं। जिस तरह पृथ्वी पर केवल एक 'समुद्र' है! उसी तरह, एक

ही 'ईश्वर' है इस रचना में... देखा जाता है कि महासमुद्र का जल मेघाच्छादित होता है, मेघों में बदल जाता है और विभिन्न स्थानों पर पृथ्वी पर बरसता है, नदियाँ बनाता है, पृथ्वी पर बहता है, कई क्षेत्रों को हरा-भरा करता है, फसलें उगाता है, लाभ उत्पन्न करता है और अंत में सभी एक ही महासागर में पहुँच जाते हैं। .

साथ ही, उस परब्र्म से, ये सभी देवता तत्व के रूप में उत्पन्न होते हैं, विभिन्न क्षेत्रों में रहते हैं, वहां के सभी लोगों को पढ़ाते हैं, उन सभी को कई लाभ पहुंचाते हैं, उन्हें सत्य का मार्ग दिखाते हैं, और अंत में उस परब्र्म, यानी उनके राज्य तक पहुंचते हैं। .

नदियों को देखने के लिए अलग-अलग जगह हैं। वे अलग-अलग आकार में हैं। अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है। परन्तु उन सब नदियों का जल एक ही समुद्र में है। उसी महासागर के जल से नदियाँ बनती हैं और अंत में पुनः उसी महासागर में मिल जाती हैं। लेकिन वे अलग-अलग क्षेत्रों में लोगों के लाभ और लाभ के लिए अलग-अलग क्षेत्रों में बह रही हैं।

साथ ही, लोग देवताओं को अलग-अलग नामों से पुकारते हैं क्योंकि वे अलग-अलग जगहों पर और अलग-अलग रूपों में देखे जाते हैं। लेकिन सभी एक ही 'ईश्वर' से उत्पन्न हुए हैं! वे जो एक ही परब्र्म से उत्पन्न हुए हैं, वे सभी अंत में फिर से उसी सत्यलोक में पहुँच जाते हैं। लेकिन उन्होंने अलग-अलग क्षेत्रों के लोगों और प्राणियों को लाभ पहुंचाने और उन्हें बुद्धिमान बनाने के लिए अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग रूप धारण किए।

सृष्टि का रहस्य यह है कि पृथ्वी पर एकमात्र समुद्र कैसा है! ईश्वर सृष्टि में एक है। जैसे समुद्र से नदियाँ निकलती हैं! देवता भी ईश्वर से निकले हुए हैं। इसलिए जो सभी देवताओं को अलग-अलग मानता है, वह 'ज्ञानी' है जो जानता है कि 'सब एक है'।

अज्ञानी व्यक्ति सदैव दुःख में रहता है। एक बुद्धिमान व्यक्ति हमेशा आनंद में रहता है। जो भी यह भाव व्यक्त करता है कि देश अलग है, क्षेत्र अलग है, धर्म अलग है, जाति अलग है, परिवार अलग है, वह अमीर है, यह

गरीब है, यह बुद्धिमान है, यह मूर्ख है! वे सब अज्ञान में हैं! अगर आप सृष्टि के रहस्य को नहीं समझते हैं!

जो भी विशेषतायें अर्थात जाति, धर्म, क्षेत्रीय विशेषतायें दिखाता है! क्या वह अपने प्रदर्शन के माध्यम से अलगाव की भावना व्यक्त कर रहा है? वे सब अज्ञान में हैं! यदि वे इस सृष्टि के रहस्य को नहीं समझेंगे तो निश्चय ही उन्हें दुःख होगा। कितनी भी पूजा कर लें! चाहे कितनी ही दुआएं कर लो! चाहे कितने ही भजन और प्रार्थना कर लो! यदि वे दान भी करते हैं तो भी उन्हें दुःख नहीं होगा।

इस सृष्टि में अनेक जातियाँ हैं। मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पौधे आदि। सभी जातियाँ एक ही ईश्वर से निकली हैं। इसलिए हमें यह जानना चाहिए कि 'सब एक हैं'।

भक्ति को 4 प्रकारों में बांटा गया है। 1) आत्मा भक्ति 2) उत्तम भक्ति 3) अनन्य भक्ति 4) पूर्ण भक्ति

1) मनोकामना से पूजा करने वाले अधम भक्ति कहलाते हैं।

2) जो बिना इच्छा के पूजा करता है उसे उत्तम भक्ति कहते हैं।

3) अनन्या भक्ति हर चीज और सबमें एक ही है।

4) साथ ही सभी एक की स्थिति, 'सभी एक', जागरूकता को पूर्ण भक्ति कहा जाता है। वे ही मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

इसलिए सृष्टि के रहस्य को समझिए कि 'सब एक हैं' और 'सब देवता एक हैं'। भगवद् गीता के माध्यम से भगवान ने जो सिखाया उसे समझें। जानो कि तुम ही सब कुछ हो। मतभेद से बचें। ईर्ष्या और द्वेष को छोड़ दो। जानवरों और निरीह प्राणियों को मत मारो। उनका मांस मत खाओ। 'हर किसी से और हर चीज से प्यार करो जैसे तुम खुद से प्यार करते हो'। दुनिया की सेवा करो। ऐसी स्थिति को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को ध्यान करना होता है। तो ध्यान करो।

'उद्धरेदात्मानात्मानम' का कारण

भगवद् गीता में भगवान द्वारा दिया गया सबसे महत्वपूर्ण संदेश उद्धरेदात्मनात्मानम है। जिसका अर्थ है अपने आप को ऊपर उठाना।

जैसा कि आप देख सकते हैं, पूरी दुनिया उन्हें ऊपर उठाने के लिए उनकी पूजा कर रही है। प्रार्थना करना, प्यार करना। लेकिन वह किसी का उत्थान करना चाहते है। इस मामले में भी दुनिया भगवान ने जो कहा है उसके विपरीत काम करती है। क्या इसका मतलब यह है कि परमेश्वर ने जो कहा वह समझा नहीं गया? जो नहीं समझेंगे वही उल्टा व्यवहार करेंगे।

और भगवान के ऐसा कहने का क्या कारण है? हम इंसान नहीं भगवान हैं। यही वास्तविक रहस्य है। लेकिन हमें लगता है कि भगवान अलग है। वह है भगवान, हम सोचते हैं कि हम इंसान हैं।

क्योंकि जब हम इंसान हैं! जब भगवान अलग है! वह आता है और हमारी रक्षा करता है। उदय होना लेकिन जब भगवान हम हैं! जब कोई दूसरा भगवान नहीं है! तो कौन आएंगे? तब कौन रक्षा करेंगे? कौन समर्थन करेंगे? और कौन उत्थान करेंगे? जब रक्षा करनेवाले भगवान खुद हम ही है तो हमें अपने आप की रक्षा करनी चाहिए। यही भगवान ने गीता में बताया है।

क्या हम देवताओं की तरह होंगे? यह सबकी शंका है। लेकिन जागरूक रहें। हम 'शरीर नहीं' हैं। 'हम आत्मा हैं'। जब 'आत्मा' भगवान है, हम सब 'भगवान' हैं! इसलिए, हमें 'स्वयं को ऊपर उठाना' चाहिए। हमें स्वयं की पूजा करनी चाहिए। इसका अर्थ है कि हमें स्वयं पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। इसका अर्थ है कि हमें अपनी प्रकृति के साथ एकजुट होना चाहिए।

वही वास्तविक 'भक्ति' है, वह 'भक्ति' है जो स्वयं की पूजा कर रही है। वेदों में भी ऐसा ही कहा गया है।

'स्वस्वरूपानुसंधानं भक्तिरीत्यभिधीयते'

अपने स्वरूप से अनुसंधान होना ही 'भक्ति' कहा जाता है।

वेमना योगी ने भी यही बात कही।

'पूज सेय सेय पुजारी तानाये!
पूज्य वस्तुवेंना भुविनि ताने!
याड पूज सेयु नेल्लदिक्कुलु ताने!
ताने नेनु, नेने तानु,वेमा !'

हम कहाँ पूजा करते हैं? हम किसकी पूजा करते हैं? वेमना योगिंद्र का कहना है कि जब सब कुछ हम ही हैं तो हमें खुद की पूजा करनी चाहिए।

यह खुद को समझने और ऊपर उठाने का एक प्रयास करना चाहिए। हमें अपनी शक्ति बढ़ानी होगी। हमें अपनी आत्मिक शक्ति से अपने रोगों का उपचार स्वयं ही करना होगा। हमें अपनी समस्याओं का समाधान अपनी शक्ति से ही करना होगा। हमें अपनी कठिनाइयों को अपने बल से ही पार करना है। हमारी शांति हमारे अपने प्रयास से अर्जित की जानी चाहिए। हमें अपने ध्यान अभ्यास के माध्यम से अपना ज्ञान प्राप्त करना होगा। हमें अपनी मुक्ति स्वयं अर्जित करनी है। ध्यान के अभ्यास से ये सब आसानी से हम स्वयं प्राप्त कर सकते हैं। जिन्होंने इसे प्राप्त कर लिया है वे योगी कहलाते हैं।

ऐसी साधना करने को 'योग' कहते हैं। इसलिए, आइए हम सब 'श्वास ध्यान' पर ध्यान करें, हम योगी बनें।

'जैसे समुद्र से लहरें उत्पन्न होती है वैसे भगवान से सभी उभर रहा है।

भगवान ने कहा योगी बनों, भोगी नहीं

आप दुनिया में चाहे कितने भी लोगों को देख लें, हर कोई सुख चाहता है! जो सुख भोगना चाहते हैं अर्थात सुख को चाहने वाले! जीवन में हर कोई खुश रहना चाहता है! जो एक इंद्रिय से नहीं बल्कि पांच इंद्रियों से आनंद का अनुभव करना चाहते हैं। चाहे कितनी भी सुख-सुविधाएं क्यों न हों, फिर भी ऐसे लोग हैं जो अधिक सुख चाहते हैं।

इसके अलावा, उन सुखों का आनंद लेने के लिए धन की विशेष रूप से आवश्यकता होती है। इसलिए, सब कुछ कमाई पर केंद्रित है। दिन का ज्यादातर समय पैसा कमाने में ही बीतता है। काम किया! कोई भी पेशा कर रहे हैं! या कुछ भी व्यापार करें! या फिल्मों के माध्यम से! या राजनीति में प्रवेश करें! हर कोई किसी न किसी तरह का पैसा कमाने के लिए लालायित रहता है। हर कोई अच्छा पैसा कमाकर टाटा, बिरला और अंबानी बनना चाहता है। ऐसा माना जाता है कि अगर आप इस तरह कमाते हैं तो आपको अच्छा महसूस होगा। वे सोचते हैं कि यही जीवन का उद्देश्य है।

तो उन्होंने किसको कमाया? लेकिन; किस प्रकार तुमने यह पाया? वह नहीं देख रहा है। क्या कमाना उचित है? सही कमाया? क्या मैंने सृष्टि और परमेश्वर की महत्वाकांक्षाओं के अनुसार हासिल किया है? वह नहीं देख रहा है। अगर आप किसी को ऐसे देखते हैं तो ऐसा लगता है जैसे उनके जीवन का लक्ष्य पैसा कमाना है। चाहे वे कितने भी अमीर, बूढ़े या अधीर क्यों न हों, वे कमाने की कोशिश कर रहे हैं। वे पैसे कमाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। सुबह उठने से लेकर रात को सोने तक दौड़ने और दौड़ने में कितना समय लगता है।

यह शहरों में सबसे अधिक स्पष्ट है। किसी से पूछने पर, किसी से बाते करने पर सभीका एक ही उत्तर है कि "हमें समय नहीं है, खाली नहीं है।" वजह है अच्छी कमाई करना और अमीर बनना। आइए पैसे से अमीर न बनें। यह सभी की जीवन महत्वाकांक्षा है।

माता-पिता कोई भी हों, संतान धन कमाने की दृष्टि से होती है। वे ऐसी पढ़ाई को प्रोत्साहित करते हैं जिससे पैसा कमाया जा सके। वे ऐसी नौकरियां करने के लिए कह रहे है। केवल ऐसी चीजें प्राप्त होने से ही धन और सुख की प्राप्ति होती है। समझ रहे है कि यही जीवन का लक्ष्य है।

इसके अलावा, अर्जित धन से, वे आनंद लेने के लिए विलासिता की चीजें प्रदान कर रहे हैं। यानी कार, बिल्डिंग, फर्नीचर आदि। यह सौभाग्य देने वाला माना जाता है। लेकिन इसके बारें में नहीं सोच रहे हैं। जिन्हें ऐसी वस्तुएँ प्राप्त नहीं हो सकतीं, वे अन्य कोई उपाय नहीं जानते, जैसे भगवान की पूजा, प्रार्थना, पूजा और आराधना करना और उन्हें ऐसे सुख प्रदान करने और उन्हें धन प्रदान करने के लिए भीख माँगना। चाहना अगर उनकी इच्छाएं पूरी नहीं होती हैं तो वे देवताओं को बदल देते हैं। धर्म बदल रहे हैं। लेकिन इसके बारें में नहीं सोच रहे हैं। इसी तरह हर कोई लिप्त होना चाहता है। वे 'अनुग्रहकारी' होने की आकांक्षा रखते हैं।

और भगवान कृष्ण ने भगवद् गीता के माध्यम से कहा कि सभी को भोग बनना चाहिए? और कुछ न बोलें? सोचना! वह स्पष्ट रूप से 'योगि बनो' कहता है। इसके अतिरिक्त इसमें कहीं भी 'भोगिबनो' नहीं कहा गया है। और 'योग' कितना महान है! योगी की स्थिति कैसी होती है! जो लोग योगी बनने का प्रयास करते हैं, यदि वे तैयार ही न हों, तो उन्हें क्या लाभ मिल सकता है! और योगी को आखिर किस तरह का दर्जा मिलेगा! यह कहा गया था।

इस प्रकार, यदि भगवान अर्जुन ने दुनिया के लोगों को 'योगी' बनने की शिक्षा दी, तो पूरी दुनिया 'भोग' बन जाएगी।

हर कोई बिरला, टाटा और अंबानी बनने की कोशिश कर रहा है। ऐसा नहीं कर सकते। लेकिन हर कोई 'योगी' बनने की कोशिश नहीं कर रहा

है जैसा कि भगवान ने कहा है। उसने यही कहा! दुनिया में करने के लिए एक और चीज! सब कहते हैं कि वह महान है, लेकिन वे महान लोग जो कहते हैं, उस पर अमल नहीं करते।

लेकिन इतने महान व्यक्ति का कहना कितना महान है? जो इसका अभ्यास करता है वह कितना महान है? कितना बड़ा मुनाफा कमाया जा सकता है! आइए निम्नलिखित श्लोकों के माध्यम से चलते हैं। आइए देखें कि उन्होंने अर्जुन को मूल गीता में क्या बनने के लिए कहा था।

'तपस्विभ्योधिको योगी ज्ञानिभ्योपि मतोधिकः।

कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन।।' (भ. गी. 6-46)

हे अर्जुन! योगी तपस्या करने वालों से, विज्ञान का ज्ञान रखने वालों से, अग्निहोत्र कर्मकांड करने वालों से श्रेष्ठ है। इसलिए तुम योगी बनो।

उपरोक्त श्लोक के द्वारा तपस्या करने वाले अर्थात् धूप में रहकर, एक पैर पर खड़े होकर, दोनों हाथों को ऊपर उठाकर, हठ योग द्वारा कठोर आसन करते हुए, अन्न-पान (उपवास) से विरत रहकर, योग करने वालों से योगी श्रेष्ठ है।

साथ ही वैज्ञानिक ज्ञान अर्थात् किताबी ज्ञान रखने वाले, विद्वतापूर्ण ज्ञान अर्थात् पुस्तकों को देखने वाले और वाक्पटु व्याख्यान देने वाले विद्वानों के स्थान पर विज्ञान का अध्ययन करने वाले! योगी महान है।

साथ ही अनुष्ठान करने वालों का अर्थ है नियमित अनुष्ठान जैसे संध्या वंदनम, सूर्य नमस्कार, गायत्री मंत्र आदि। साथ ही, 'योग' करने वाला एक 'योगी' और यज्ञ अनुष्ठान करने वालों से बड़ा होता है। इसलिए, अर्जुन योगी नहीं है! ऐसा प्रभु ने कहा था। और योगी कौन है? योग क्या है?

योग शास्त्र के मूल पुरुष श्री पतंजलि महर्षि ने योग को 'योगः चित्तवृत्ति निरोधः' ऐसा परिभाषाण दिया है।

बचाव ही योग है। चित्त वृत्तियों का अर्थ है मन की गतिविधियाँ, चित्त का अर्थ है मन, मन की गतिविधियों का अर्थ है विचार। अर्थात मन में आने वाले विचारों को रोकना ही योग है। अर्थात निर्विचार अवस्था में रहना ही

'योग' कहलाता है। जो उस अवस्था में है वह 'योगी' कहलाता है।

ब्र्मर्षि पत्री जी ने हमें इस तरह के विचारों के बिना 'योग अवस्था' में रहने का एक आसान और सरल तरीका बताया है, 'श्वास ध्यान'। जो कोई भी सांस पर ध्यान करता है, वह जल्दी से अपने विचारों को रोक देगा और अ-मन की स्थिति में होगा, यानी 'आत्मा अवस्था' में होगा। इस प्रकार 'योग' का अर्थ आत्मा के साथ होना है। क्या 'आत्मा' का अर्थ 'भगवान' नहीं है? अर्थात ईश्वर के साथ रहना ही 'योग' है। ऐसे व्यक्ति को 'योगी' कहा जाता है।

इसलिए, भगवान ने कहा कि जो योगी भगवान के साथ एक नासमझ अवस्था में है, वह उन लोगों की तुलना में बहुत अधिक है, जो अपने मुंह से भगवान की प्रार्थना करते हैं, जो मन में उनके नाम का स्मरण करते हैं, जो उन्हें इच्छाओं के साथ पढ़ते हैं, उनकी तुलना में बहुत अधिक है। जो यज्ञ अनुष्ठान करने वालों की तुलना में उनके बारें में बात करते हैं।

योंतः सुखोन्तराराम स्तथान्तर्ज्योतिरेव यः।
सयोगी ब्र्ह निर्वाणं ब्र्हभूतोधिगछति।। (भ. गी. 5-24)

जो आत्मा को अपने में भोगता है, आत्मा से खेलता है, वह आत्मा में ही रहता है! ऐसा योगी ब्र्मस्वरूप बन जाता है और ब्र्म साक्षात्कार प्राप्त करता है। अर्थात 'ध्यान' द्वारा जो 'आत्मा से' अर्थात 'ईश्वर' के साथ निर्विकार अवस्था में रहता है, वह अन्त में ईश्वर को प्राप्त कर लेता है। अर्थात इस श्लोक के माध्यम से भगवान ने कहा कि उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होगी। अर्थात ध्यान करने वाले ही ईश्वर को प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन आप चाहे कितनी भी साधना कर लें, आपको ईश्वर की प्राप्ति नहीं होगी। इसलिए, भगवान ने कहा कि ध्यान योगी का अर्थ है कि जो लोग ध्यान करते हैं वे सभी साधना करने वालों से बेहतर हैं।

जैसा कि 'ध्यान' महान है, 'ध्यान' के माध्यम से मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। इसलिए, भगवान ने कहा कि सभी को 'ध्यान योगी' बनना चाहिए। इसके अलावा, कहीं भी अंबानी बनने, पद अर्जित करने के बारें में नहीं कहा गया है। यह बात सभी को समझनी चाहिए।

और तो और योगी बनने का प्रयास करने वाला योगी न भी बने तो उसे क्या लाभ हो सकता है! इसके अलावा, यदि आप ध्यान करेंगे तो भविष्य में किस प्रकार के लाभ होंगे! भगवान ने यह भी कहा। क्योंकि ध्यान में निर्विचार की स्थिति अर्थात मन को वश में करने की स्थिति, मन को खाली करने में समर्थ होने की स्थिति को प्राप्त करना बहुत कठिन होता है। अर्जुन ने प्रभु से यही पूछा! तो मेरी क्या स्थिति है यदि मैं वह प्राप्त नहीं कर सकता जो मैं प्राप्त करना चाहता हूं अर्थात यदि मैं 'ध्यान' शुरू नहीं कर सकता और आत्मा को प्राप्त नहीं कर सकता। अर्जुन को संदेह था कि क्या वह कुछ भी नहीं करने से अहंकार खो देगा और साधना को पूरा नहीं कर पाने के कारण परम, और अंत में दोनों में से सबसे खराब हो जाएगा। निम्नलिखित श्लोक के माध्यम से यही बात भगवान से पूछी गई है।

कच्चिन्नोभयविभ्रस्ट श्चिन्नाभ्रमिव नश्यति।

अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रम्हणःपथि।। (भ.गी. 6-38)

हे कृष्ण! ब्रम्ह के मार्ग में (योग का मार्ग) मूर्ख जो इन दोनों चरम सीमाओं के मार्ग में स्थिर नहीं होता है और बिखरे हुए बादल की तरह नष्ट हो जाता है क्या?

इसका मतलब यह है कि अगर आप इस दुनिया में पैसा कमाना बंद कर दें और बैठकर ध्यान करें, तो आपको इस दुनिया में मिलने वाले सुख नहीं मिलेंगे! साथ ही योगाभ्यास पूर्ण न करने के कारण परमात्म लाभ अर्थात मोक्ष न मिलना! क्या मैं दोनों के लिए बुरा आदमी बनूंगा? अर्जुन ने अपनी शंका व्यक्त की। अर्थात जो बिना साधना पूर्ण किये योगाभ्यास के बीच में ही शरीर छोड़ देते हैं उनकी क्या दशा होती है? भगवान कृष्ण से पूछताछ की गई। उसके लिए भगवान ने कहा।

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शास्वतीः समाः।

शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोभिजायते।। (भ. गी. 6-41)

तात्पर्यः- अत्ति योगभ्रष्ट (मृत्यु के बाद) पवित्र आत्माओं की दुनिया है। इसे प्राप्त करने के बाद, वह कई वर्षों तक वहाँ रहे और अगले एक गुणी धनी

व्यक्ति के घर में पैदा हुए।

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमतां।

एतद्दि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशं।। (भ.गी. 6-42)

तात्पर्यः- या वह बुद्धिमान योगियों के वंश में पैदा हुआ था। ऐसा जन्म संसार में अत्यंत दुर्लभ है। यहां हमें थोड़ा सोचना होगा। आमतौर पर साधक को कोई लाभ दिखाई नहीं देता। वे ज्यादा पैसा नहीं कमाते हैं। इसके अलावा, आमतौर पर जिनके पास कम पैसा है वे ध्यान कर रहे हैं। उनमें से बाकी क्या हैं? वे कुछ नहीं करते! बिना कुछ कमाए! बिना कुछ अनुभव किए! वह हमेशा इसी तरह ध्यान करते हुए बैठते हैं। वे बहुत मूर्ख हैं! जब वे ध्यान करने वालों को देखते हैं तो बहुत से लोग यही सोचते हैं।

ऐसे भी हैं जो कितने महान हैं जो इस प्रकार ध्यान करते हैं! वे स्वर्ग में किस महान लोक में पहुँचते हैं! और कितना ऊंचा जन्म पाते हैं! भगवान ने उपरोक्त श्लोकों के माध्यम से सूचित किया है। उनके अनुसार अगले जन्म में धनवानों के घर में और ज्ञानी योगियों के घर जन्म लेंगे और ऐसा जन्म दुर्लभ है। इसलिए उन्हें सबसे महान 'योगी' कहा जाता है। आखिर यही कारण है कि एक 'योगी' को यज्ञ और यज्ञादि कर्मकांड करने वालों से भी बड़ा कहा जाता है।

इसके अनुसार 'ध्यान' करने वाला 'योगी' कितना महान है! कोई समझ सकता है कि वह कितना भाग्यशाली है। वर्तमान में साधक साधारण दिखाई दे सकते हैं। दुनिया की नजरों में साधारण हो सकता है। लेकिन भगवान ने जो कहा है उससे यह समझा जा सकता है कि वे सबसे महान हैं। कुछ अब अमीर हो सकते हैं।

लेकिन उस मृत्यु के बाद पैसे को अगले जन्म में नहीं ले जाया जा सकता है। इसके अलावा, हम नहीं जानते कि उनका पुनर्जन्म कैसा होगा। लेकिन भगवान ने कहा कि जिन लोगों ने ध्यान किया है, वे न केवल सर्वोच्च दुनिया में पवित्र दुनिया को प्राप्त करेंगे, बल्कि अगले जन्म में वे अमीर के रूप में नहीं, बल्कि महान योगियों के रूप में पैदा होंगे।

आइए निम्नलिखित श्लोक को देखें:-

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः।

अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम् ।। (भ. गी. 6-45)

तात्पर्य :- ऐसा प्रयत्न करने वाला योगी निष्पाप हो जाता है, अनेक जन्मों के अभ्यास से योग की सिद्धि प्राप्त करता है और परमगति को प्राप्त होता है।

क्योंकि ऐसा ध्यान करने वाला योगी न केवल महान जन्म प्राप्त करेगा, बल्कि अंततः मोक्ष भी प्राप्त करेगा। अर्जुन की 'योगिविका!' ऐसा प्रभु ने कहा था।

उसने अर्जुन को जो बताया वही उसने हम सबको बताया! इसलिए बिरला, टाटा और अंबानी बनने की कोशिश बंद करो और योगी बनने की कोशिश करो जैसा कि भगवान ने कहा है। 'ध्यान' करना चाहिए। यह जान लेना चाहिए कि इस संसार में 'ध्यान' करने से बढ़कर कोई दूसरा महान कार्य मनुष्य नहीं कर सकता। यही ईश्वर का संदेश है।

हमें एक बात और याद रखनी चाहिए। हम कितनी भी कोशिश कर लें, हम बिरला, टाटा और अंबानी नहीं बन सकते। कारण योग्य होना चाहिए। लेकिन अगर हम ध्यान करें तो हम योगी बन सकते हैं। योगी बनने का, ध्यान करने की शक्ति का अधिकार सभी को है। इसलिए सभी ध्यान करें। भगवान के कहे अनुसार 'योगी' बनें।

हंसों की कोई पंक्ति नही होगी, रत्नों के ढेर नही होगा,
सज्जन के कोई समूह नही होगा,
योगियों का कोई समूह नही होगा।

भगवद् गीता के अनुसार योगी कौन है? भोगी कौन है?

या निशा सर्व भूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः।।
(भ.गी. 2-69)

तात्पर्यः- आम लोगों (भोगी) के लिए क्या है। योगी के लिए रात दिन है, आम आदमी के लिए दिन योगी के लिए रात है।

इस कारण सभी का विचार है कि भोगी दिन में जागता है और रात को सोता है और योगी दिन में सोता है और रात में जागता है। यहाँ भी भगवान कुछ कहते हैं, जो सब समझते हैं वह दूसरी। लेकिन भगवान कृष्ण का मतलब यह नहीं था।

उनका कहना है कि भोगी को किसमें रुचि है, योगी को उसमें रुचि नहीं है और योगी को भोगी में रुचि नहीं है।

स्वाभाविक रूप से भोगी सांसारिक चीजों जैसे पैसा कमाना, सुख-सुविधाएं, पद, नौकरी, रिश्तेदार, समारोह और पार्टियों में बहुत रुचि दिखाता है। लेकिन योगी इन बातों के प्रति बहुत उदासीन है। यानी वह रात को सोता है।

साथ ही भोगी आध्यात्मिक चीजों यानी आध्यात्मिक चीजों के प्रति उदासीन होकर सोता है। लेकिन योगी को उन चीजों में काफी दिलचस्पी है।

इसके अनुसार हमें योगी जैसा बनना चाहिए! एक योगी को आध्यात्मिक चीजों यानी आत्मा के मामलों में रुचि दिखानी चाहिए। एक योगी की तरह कार्य करें। और एक योगी क्या करता है? वह 'ध्यान' करता है। यानी हमें भी ध्यान करना चाहिए। ध्यान में रुचि दिखाएं। भगवान कृष्ण ने जो कहा उसका यही अर्थ है।

भगवान का पसंदीदा कौन है?

आम तौर पर बहुत से लोग कहते हैं कि वे भगवान को पसंद करते हैं। क्या आपको यह बहुत पसंद है? इसका मतलब है कि! यह बहुत पसंद है! के रूप में भी जाना जाता है। आप कैसे कह सकते हैं कि आप परमेश्वर से प्रेम करते हैं? यानी कोई कहता है कि मैं रोज पूजा करता हूं, कोई कहता है भजन करता हूं, कोई प्रसाद चढ़ाता हूं, कोई रोज है जप करता हूं, कोई कहता है मैं रोज मंदिर जाता हूं। कहा जाता है कि यह सब इसलिए किया जाता है क्योंकि ईश्वर चाहता है।

वह कहता है कि वह भगवान को पसंद करता है, लेकिन क्या वह वास्तव में भगवान को पसंद करता है या नहीं? ऐसा मत सोचो। क्योंकि भगवान को खुश करने का कोई मतलब नहीं है। भगवान को खुद को खुश करना है। इस प्रकार उसका जीवन तब धन्य होगा जब वह परमेश्वर को प्रसन्न करेगा।

और भगवान को खुश करने के लिए! किसी को जो पसंद है उसे करना काफी नहीं है। परमेश्वर जो करता है उसकी स्तुति करनी चाहिए! और अगर आप भगवान को खुश करना चाहते हैं, तो आपको पता होना चाहिए कि भगवान आपको खुश करेंगे। यह जाने बिना कि पूजा, प्रार्थना, भजन करना, नामस्मरण करना जैसा आप चाहते हैं, यदि आप सोचते हैं कि आप भगवान से प्रसन्न हैं तो कोई लाभ नहीं है। इसलिए इस मामले को अच्छी तरह सोच-विचार कर लेना चाहिए। हमें पता होना चाहिए कि हम जो कुछ भी करते हैं वह भगवान को प्रसन्न करता है।

और तुम कैसे जानते हो? ऐसा कहा जा सकता है की लेकिन यह जानना आसान है।

अर्थात भगवद्गीता के द्वारा स्वयं भगवान किसे पसन्द करते हैं इसकी सूचना स्वयं दी है। निम्नलिखित श्लोक इसे स्पष्ट करते हैं।

या निशा सर्व भूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।

स्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः।। (भ. गी. 2-69)

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।

प्रियो ही ज्ञानिनोत्यर्थमहं सा च मम प्रियः।। (भ. गी. 7-17)

तात्पर्य :- हे भरतवंश में श्रेष्ठ अर्जुन! मेरी सेवा करने वाले चार प्रकार के लोग हैं: वे जो संकट में रोते हैं, जो धन की इच्छा रखते हैं, जो भगवान को जानने में रुचि रखते हैं, और जो आत्म-ज्ञान रखते हैं। उनमें जो परमात्मा की भक्ति करता है वही श्रेष्ठ है।

मुझे 'ज्ञानी' पसंद है और वह मुझे ज्यादा पसंद करते हैं। उपरोक्त श्लोकों के अनुसार, चार प्रकार के भक्तों में, अर्थात, कठिनाइयों से छुटकारा पाने के लिए भजन और प्रार्थना करने वाले 'आरती' से अधिक, 'अर्थार्थ' से अधिक, जो धन और संपत्ति की कामना करते हैं, और ईश्वर को जानने के लिए शास्त्रों का अध्ययन करने वाले 'विद्वानों' से अधिक, 'ध्यान'। ईश्वर ने कहा है कि मुझे 'ज्ञान' पसंद है जिसने "ध्यान" के माध्यम से आत्म-ज्ञान प्राप्त किया। अर्थात भगवान श्रीकृष्ण ने स्पष्ट कहा कि मुझे सभी भक्तों से अधिक ध्यान करने वाला प्रिय है।

आइए निम्नलिखित छंदों को देखें कि वह किसे पसंद करता है।

अनपेक्ष शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथ :।

सर्वारम्भ परित्यागि यो मद्भक्तस्स में प्रियः।। (भ.गी. 12-16)

तात्पर्यः- वह जो इच्छाओं से रहित है, ह्रदय से शुद्ध है, बुद्धिमान है, किसी भी चीज में उदासीन है, दुखी नहीं है, सभी गतिविधियों को त्याग देता है। जो मुझमें भक्ति करता है, मैं उससे प्रेम करता हूं।

उपरोक्त श्लोक के अनुसार, उन्होंने कहा कि उन्हें इच्छाओं के साथ पूजा नहीं करनी चाहिए, अंतर शुद्धि का अर्थ है अच्छे गुणों वाले, किसी भी चीज की उम्मीद नहीं करनी चाहिए, जो कुछ भी होता है उसके बारें में दुखी नहीं होना चाहिए, सभी कामुक गुणों को त्याग देना चाहिए, अपने से यानी आत्मा

से प्यार करना चाहिए। आत्मा, और ऐसे लोग वे हैं जिन्हें वह पसंद करता है।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण ऐवच ।

निर्ममो निरहंकारः सम दुःख सुखः क्षमी।। (भ.गी. 12-13)

सन्तुष्टस्सततम योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तस्स में प्रियः।। (भ. गी. 12-14)

तात्पर्यः- जो सभी जीवों के प्रति द्वेष नहीं रखता, जो मित्रवत और दयालु है, जिसका कोई अभिमान नहीं है, जो सुख और दुःख में समान है, जो धैर्यवान है, जो हमेशा संतुष्ट रहता है, जो तंदुरुस्त है, जिसने मन को वश में कर लिया है, जो अपने निश्चय पर दृढ़ है, मुझ में झआत्मा में ट के प्रति समर्पित है और जिसके पास मन का मन है। मैं उसे प्यार करता हूँ जो आत्मा में भक्त है।

यहां भी उन्होंने स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है कि वह किसे पसंद करते हैं। किसी भी जानवर पर अत्याचार न करें और उनके साथ मित्रवत व्यवहार करें। उन पर दया करना, 'मैं' का अभिमान न रखना, 'मेरा' होना, जो है उसमें संतुष्ट रहना, 'ध्यान' द्वारा मन पर अधिकार करना मन और बुद्धि को बाह्य विषय से हटाकर भगवान पे मतलब आत्म पर रखना चाहिए अर्थात ध्यान करना चाहिए। श्री कृष्ण ने बताया है कि 'ऐसा कौन करता है वही मुझे प्रिय है।'

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।

हर्षामर्ष भयोद्वेगैर्मुक्तो यस्स च में प्रियः ।। (भ. गी. 12-15)

तात्पर्य :- जिससे संसार के लोग डरते हैं, संसार कौन है मुझे वे पसंद हैं जो डरते हैं, जो खुशी, क्रोध, भय और अवसाद से मुक्त हैं।

यो न ह्यष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।

शुभाशुभ परित्यागी भक्तिमान यस्स में प्रियः ।। (भ. गी. 12-17)

तात्पर्यः- जो हर्षित होता है, जो द्वेष करता है, जिसे दुःख होता है, जो शुभ-अशुभ, पुण्य-पाप का त्याग करने वाला भक्त मुझे प्रिय है।

समशत्रौ च मित्रे च तथा मानावमानयोः।

शीतोष्ण सूखा दुःखेषु समसंग विवर्जिताः।। (भ. गी. 12-18)

तुल्यनिंदास्तुतिरमौनि सन्तुष्टो एनकेनचित।

अनिकेतः स्थिरमतिः भक्तिमान्मे प्रियो नैराः।। (भ. गी. 12-19)

तात्पर्यः- वह सुख-दुःख में समान था और शत्रु और मित्रों में शीत था। जो किसी चीज में उदासीन है, जो तिरस्कार के बराबर है, जो चुप है, जो किसी को मिला है या उसके पास संतुष्ट है, जिसका कोई निश्चित निवास नहीं है, जो स्थिर मन का है। मुझे धर्मपरायण व्यक्ति पसंद है।

यहां कहा जाता है कि मुझे वह पसंद है जो हर चीज में बराबर हो। वह समभाव कोई भी 'ध्यान' के द्वारा ही प्राप्त कर सकता है। जो 'ध्यान' नहीं करता वह कभी भी समत्व को प्राप्त नहीं कर सकता।

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।

श्रद्धदाना मत्परमा भक्तास्तेतीव में प्रियाः।। (भ. गी. 12-20)

तात्पर्य :- मुझे वे लोग पसंद हैं जो श्रद्धाभवंतु हैं, जो मुझ (आत्मा) में रुचि रखते हैं और इस अमृत रूप पर गुणों का अभ्यास करते हैं।

इस प्रकार भगवान ने उपरोक्त श्लोकों के माध्यम से बताया है कि वे किसे पसंद करते हैं। भगवान उन्हें पसंद करते हैं जो उनके कहे अनुसार कार्य करते हैं और चलते हैं।

इसके अलावा मैं पूजा कर रहा हूं, मैं भजन कर रहा हूं, मैं प्रसाद चढ़ा रहा हूं। यदि वे सोचते हैं कि वे प्रार्थना क्रम कर रहे हैं और वास्तविक जीवन में प्रभु जो कहते हैं उसका अभ्यास नहीं करते हैं, तो वे कभी भी प्रभु को पसंद नहीं करेंगे। जो उसे पसन्द नहीं करते, वे चाहे कुछ भी कर लें, चाहे जैसे भी जी लें, व्यर्थ है। इसलिए, भगवान के कहे अनुसार चलो और उसे प्रसन्न करो! जीवन धन्य करो!

विशेष रूप से, किसी पर अच्छी कृपा होनी चाहिए। इसका अर्थ है कि जीवन के प्रति हिंसा नहीं करनी चाहिए, अर्थात 'मांस भक्षण' से बचना चाहिए। इसके अतिरिक्त उसे अपना प्रिय 'आत्मा ज्ञान' प्राप्त करना होता है। ध्यान उसका मार्ग है, इसलिए ध्यान करो। जो दोनों का अभ्यास करते हैं वे धीरे-धीरे भगवान द्वारा वर्णित गुणों को प्राप्त करेंगे। अंत में व्यक्ति को 'आत्मज्ञान' भी प्राप्त होता है। उन्हें भगवान के पसंदीदा की सूची में शामिल किया जाएगा।

भगवद् गीता के अनुसार

गोविंदा! गोविंदा कहना है या गोविन्द के साथ रहना है?

हर कोई भगवान को जानने में इच्छुक है। भगवान से बहुत प्यार है - ऐसे बोलते है। ऐसा कहकर वह हर रूप यानी फोटो, चित्र और मूर्ति की पूजा करता है। नाम का उच्चारण किया जाता है। पूजा व स्तुति की जाती है। मन्त्र का जप लाक्षणिक रूप से किया जाता है। वे अब तक यही करते आ रहे हैं। वे संतुष्ट हैं कि यह पूजा है। वे संतुष्ट हैं कि भगवान के मामले में भी ऐसा ही किया जाना चाहिए।

लेकिन ये सब केवल क्षणिक संतुष्टि देते हैं और वास्तविक सुख, ब्र्ह्मानंद यानी मुक्ति नहीं दे सकते। ऐसा 'ब्र्ह्मानंदम', 'अवर्णनीय आनंद' अर्थात अवर्णनीय आनंद, केवल उन्हीं को प्राप्त होता है जो ईश्वर के सान्निध्य में होते हैं। ईश्वर तक पहुँचने वाले ही इसे प्राप्त करते हैं। इसलिए वे कहते हैं 'गोविंदा! गोविंदा !! आपको गोविंदा के साथ होना चाहिए'। भगवान! कहना अलग है, भगवान के साथ होना अलग है। कारण है भगवान! जो परमेश्वर के साथ है वह उस से बड़ा है जो है भाग्यशाली आदमी।

एक छोटा सा उदाहरण देखते हैं। भले ही पति अस्थायी रूप से पत्नी से दूर क्यों न हो! हमेशा के लिए दूर! अंतहीन चिंता। दुखी होगा। इस नुकसान को सहन करने में असमर्थ, उसने अपने पति की फोटो अपने पास रख ली और उसे देखती रही। पति के बारें में बातें सबको बताई जाती हैं। वे हर समय अपने पति के बारे में सोचते रहते है अगर वे हमेशा के लिए दूर हो जाते हैं तो उनके फोटो पर माल्यार्पण कर फूल चढ़ाए जाएंगे।

थोड़ा गौर करो तो ऐसे कितने भी काम करो, वह सब अल्पकाल के

कर्म होंगे, लेकिन पति संतुष्ट है; क्या आप अपने पति के साथ रहकर खुश नहीं रह सकतीं? कुछ ऐसी ही स्थिति पति-पत्नी के मामले में भी होती है। साथ ही हम भगवान के उस रूप की पूजा करते हैं जो हमारे पास नहीं है।

यदि आप कोई मंत्र बोलते या जपते हैं, तो भी जितना आनंद भगवान के साथ रहने से मिलता है, उतना आनंद नहीं मिलता। लेकिन सच्चे भगवान के साथ! वह आनंद अवर्णनीय है, है ना? इसलिए, उसे उसके साथ होना चाहिए, उसकी मूर्ति के साथ नहीं, उसकी छवि के साथ नहीं। उन्हें नाम न लेने की चिंता होनी चाहिए।

और क्या यह संभव है? यह सम्भव है! वह तरीका है 'श्वास पर ध्यान'। ध्यान के द्वारा ईश्वर तक पहुँचा जा सकता है। उसके साथ हो सकता है। वह चिंतित हो सकता है।

यदि आप भगवान के साथ रहना चाहते हैं, तो यह आपके हाथों से पुजा करना संभव नहीं है। उनके मुख से बोले जाने वाले स्तोत्र और भजन संभव नहीं हैं। जप से मनमुताबिक जप संभव नहीं है। कारण यह है कि इस तरह की कितनी भी बातें की जाएं, वह उसके पास नहीं है। ईश्वर इन सबसे परे है। इनसे ईश्वर तक पहुंचना असंभव है। ये और कुछ नहीं बल्कि उसकी अस्थायी याद हैं।

उससे जुड़ने के लिए! उसे पाने के लिए! उसके साथ रहना! निर्विकार अवस्था में की गई साधना 'ध्यान' से ही संभव है। कारण यह है कि ईश्वर 'आत्मा' का रूप है। वह मानवीय इंद्रियों के लिए अगोचर है, वह दुर्गम है। इसलिए इंसानी इंद्रियां कितनी भी कोशिश कर लें, भगवान को नहीं पाया जा सकता। मानवीय इंद्रियों में वह शक्ति नहीं है। परमात्मा अलौकिक अवस्था में पाया जाता है। उस अवस्था को 'ध्यान' से ही प्राप्त किया जा सकता है। ऐसे कई 'योगी' हैं जिन्होंने इसे हासिल किया है। उसे प्राप्त करके उन्होंने अपने जन्म को धन्य कर दिया।

आइए देखें कि ध्यान करने वाले योगी भगवान के साथ कैसे रह पाए। मनुष्य के पास दो प्रकार की इंद्रियाँ होती हैं। (1) बाह्य अंग, (2) आंतरिक

अंग, बाह्य अंग अर्थात पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच कर्मेन्द्रियाँ। आंतरिक शरीर मन है, हमें दोनों का अतिक्रमण करना चाहिए।

जब हम पूजा, भजन, नाम, व्रत और स्तोत्र करते हैं, तो हम बाहरी इंद्रियों का उपयोग कर रहे होते हैं। इसलिए इंद्रियों को संयमित रखना चाहिए। इसका अर्थ है कि हाथ बंधे हों और पैर बंधे हों। अपनी आँखें बंद करें। चुप रहें। यह ध्यान की पहली अवस्था है।

जैसे ही कोई ऐसे बैठता है, उसके भीतर से विचार आने लगते हैं। यानी दिमाग काम कर रहा है। इसका मतलब है कि बाहरी इंद्रियां काम नहीं कर रही हैं, लेकिन आंतरिक मन काम कर रहा है। लेकिन मन भी काम न करें। मन के पार। यानी सोचना बंद कर दें।

कई इसे हासिल करने के लिए मन में एक नाम याद करते हैं। कुछ लोग एक मंत्र का जाप करते हैं। फिर भी अन्य लोग अपने मन को किसी रूप, वस्तु या शरीर के किसी भाग पर केन्द्रित करते हैं। जब आप ऐसा करते हैं, तो ऐसा लग सकता है कि विचार नहीं हैं, लेकिन मन है। आप कितनी भी देर ऐसे ही बैठे रहें, मन तो है ही। इसका मतलब है कि भीतर का दिमाग काम कर रहा है, यानी हम दिमाग का इस्तेमाल कर रहे हैं। लेकिन पारलौकिक स्थिति में नहीं पहुंचे। इसलिए न केवल बाहरी इंद्रियों पर बल्कि आंतरिक मन पर भी काबू पाया जाना चाहिए। काम मत करो। यानी मन में कुछ भी नहीं होना चाहिए। दिमाग से कुछ मत करो। तभी, जैसा कि प्रभु ने कहा है, हम इंद्रियों के अधीन हो जाएंगे।

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिंत्यं च कूटस्थमचलम ध्रुवं।। (भ.गी. 12-3)
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः।। (भ. गी. 12-4)

तात्पर्यः- जिन्होंने सभी इंद्रियों को अच्छी तरह से महारत हासिल कर लिया है और जो इंद्रियों के समान हैं, जो सभी जीवों के अधीन हैं, जो अक्षर परब्रह्मण का ध्यान करते हैं, जो निर्देशित नहीं किया जा सकता है, जो इंद्रियों को दिखाई

नहीं देता है, जो चिन्तित नहीं हो सकता, जो अचल है, जो नित्य है, जो सर्वव्यापी है, वे मुझे प्राप्त होते हैं।

लेकिन इस स्थिति में आने के लिए, यानी, बिना विचारों की स्थिति, आसानी से, कृपापूर्वक और जल्दी से, व्यक्ति को 'श्वास पर ध्यान' करना होगा। यदि ऐसा किया जाता है, तो स्थिति स्वयं ही आ जाएगी। बहुत से लोग जिन्होंने ध्यान किया है इस तरह से अनुभव किया है।

इस प्रकार, 'श्वास पर ध्यान' के माध्यम से, जब कोई विचार नहीं, यानी कोई मन नहीं है, यानी इंद्रियों से परे, केवल एक चीज बची है, वह है 'आत्मा'। तो हम 'आत्मा' के साथ हैं। हम 'आत्मा की स्थिति' में हैं। 'आत्मा' का अर्थ है 'स्वयं भगवान!' यानी हम 'भगवान' के साथ हैं। हम 'गोविन्द' के साथ रहेंगे।

यह वह अद्भुत अवस्था है जिसे मनुष्य को प्राप्त करना चाहिए, पहुंचना चाहिए, प्राप्त करना चाहिए। इस अवस्था में व्यक्ति को अनंत, अवर्णनीय आनंद की अनुभूति होती है। वे चाहे कितने भी जन्म ले लें, चाहे वे अपने जीवन में कितना भी प्राप्त कर लें, उनके पास कितने भी हों, उन्हें कितना भी मिल जाए, उन्हें अतुलनीय सुख और ब्र्ह्मानंद प्राप्त होगा। इस अवस्था को 'समाधि अवस्था' कहा जाता है।

इनका जन्म इसी से धन्य होता है। कारण वे हैं जिन्होंने 'आत्मा' को प्राप्त कर लिया है। इसका अर्थ है कि जो 'ईश्वर' को प्राप्त कर लेते हैं, वे 'ईश्वर' के लोक में पहुँच जाते हैं।

'सत्यलोक' पहुँचो। वापस नहीं आएगा। भगवद् गीता में यही स्थिति है।

निम्न श्लोक के माध्यम से बताया गया है। वह ब्र्ह्मा पृथ्वी पर लौट आता है।

आ ब्रह्म भुवनाल्लोका पुनरावर्तिनोर्जुन ।
मामुपेत्य तो कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते ।। (भ. गी. 8-16)

हे अर्जुन! भले ही आप ब्र्म्मा के लोकों की तरह लोकों में पहुँच जाएँ, आपको फिर से जन्म लेना होगा! (आप पृथ्वी पर आएंगे)। लेकिन अगर आप दुनिया में पहुंच जाते हैं जहां मैं (सत्यलोक) हूं यानी अगर आप मुझ तक पहुंच जाते हैं, तो आप दोबारा वापस नहीं आएंगे।

ब्र्म्मर्षि पत्री जी ने भी यही बात कही थी। 'यदि आप पुण्य करते हैं, तो आप पुण्य की दुनिया में पहुँचेंगे। आप लौटेंगे'। साथ ही 'यदि आप तपस्या करते हैं, तो आप दुनिया में पहुंचेंगे। आप वापस आएंगे'। लेकिन 'जो ध्यान करता है और सत्यलोक पहुंचता है वह कभी वापस नहीं आता'।

तो 'श्वास पर ध्यान'। 'गोविन्द' की शय्या से जुड़ जाओ। 'गोविन्द' के साथ रहो। 'गो' का अर्थ है इंद्रियां, 'गोविन्द' का अर्थ है 'आत्मा' जो इंद्रियों का स्वामी है। इसका अर्थ है 'आत्मा के साथ रहो। जीवन धन्य हो। इसे मोक्ष कहते हैं। इसलिए गोविंदा! गोविंदा !! कहने के लिए नहीं। गोविंद के साथ रहना जानो।'

कौए को भले ही अमृत मिल जाए,
लेकिन वह गंदगी से ही संतुष्ट होता है।

ऐसे ही यदि मूर्ख को श्रेयो मार्ग (भगवान का मार्ग)
लभ्य होने पर भी प्रेम मार्ग (प्रापंचिक मार्ग) ही तृप्ति देता है।
उसी का अनुसरण करते है।

भगवान तक कैसे पहुंचना है?

बहुत से लोग भगवान तक पहुँचने के लिए भगवान का नाम जपते हैं। भजन करते है। स्मरण करते है। वे केवल भगवान का नाम जानते हैं। लेकिन वह कैसा है? आप कहां हैं? पहुँचने के लिए कैसे करें पता नहीं किस रास्ते से पहुँचना है। न जाने कितनी देर से उस नाम का कई बार आतुरता और आरती से जप कर रहे हैं। लेकिन अगर आप इसे जीवन भर करते हैं, तो भी आप इसमें शामिल नहीं हो पाएंगे।

क्योंकि वे केवल भगवान का नाम जानते थे। इसके अलावा, वे नहीं जानते कि परमेश्वर कैसा है। यह न जानने के कारण वे बहुत देर तक एक ही ज्ञात नाम का जप करते रहते हैं। आइए कारण के इस छोटे से उदाहरण को देखें। अपने एक दोस्त से मिलने दिल्ली गया, जिससे वह मिला नहीं। वह केवल दोस्त का नाम जानता है। वह किस तरह का है? कहाँ हैं? उस तक कैसे पहुंचे? पता नहीं था। इसलिए दिल्ली में ऐसे वैसे घुमते थे, उनके नाम बोलते थे, चिल्लाते थे लेकिन ऐसे करने से दोस्त के पास कैसे पहुंचेंगे? सोचिये, ऐसा कितने दिनों तक करेंगे तो भी पहुँच नहीं सकता है न।

इसी तरह भगवान तक पहुँचने के लिए, व्यक्ति को यह जानना चाहिए कि वह कैसा है। जानिए कहां है। पहुंचना जानते हैं। तभी ही पहुँच सकता है इसलिए, भगवान का नाम जपना नहीं है। याद नहीं आ रहा है। कहने के लिए नहीं। ईश्वर को जानना महत्वपूर्ण है। और भगवान कैसा है? इसका अर्थ है कि वह अनंत शक्ति का अवतार है। उस ऊर्जा का नाम आत्मा है। इसका अर्थ है 'आत्मा' ईश्वर है।

वह सर्वव्यापी है। यानी सभी मनुष्यों, सभी जीवित प्राणियों और

जानवरों में है। क्या इसका अर्थ यह हुआ कि जो ईश्वर सबमें है वह हममें भी है ?

उस तक कैसे पहुंचे? जो दूर है, उस तक पहुंचने के लिए अंतर्मुखी होना पड़ता है। अर्थात जिनके पास उन्हें अपने भीतर जाना चाहिए। इस तरह अंदर जाने के लिए व्यक्ति को 'श्वास पर ध्यान' करना चाहिए। यदि आप ध्यान करते हैं, तो आप धीरे-धीरे शरीर को पार कर सकते हैं, मन को पार कर सकते हैं और आत्मा यानी ईश्वर तक पहुंच सकते हैं।

बहुत से लोग ध्यान के माध्यम से भगवान तक पहुँचे हैं। धन्य हो तुम इसलिए ईश्वर तक पहुंचना नाम जप या मंत्र जप से नहीं है। साधना करो।

जिसने बड़ी मेहनत से यात्रा की है,
वह अपनी मंजिल तक पहुँच गया है।
आप तुरंत कितने खुश होंगे!
इसी तरह, जिसने कई कष्टों का अनुभव किया है,
वह भगवान तक पहुँचता है।
वह इतना ब्रह्मानंद प्राप्त करता है'।

भगवद् गीता में कठिनाइयों और समस्याओं के बारें में

सामान्य तौर पर हर किसी के जीवन में कई मुश्किलें और परेशानियां आती हैं। ये समस्याएं और कठिनाइयाँ हैं। किसी के लिए बहुत बुरा। असहनीय भी! इसलिए हर कोई इनसे बाहर निकलने कोशिश कर रहे हैं।

स्वाभाविक रूप से, दुनिया भर में कोई भी जो करने की कोशिश करता है वह भगवान की एक छवि के पास, किसी मंदिर में, किसी मंदिर में या किसी चर्च में या किसी मस्जिद में बैठना और अपनी समस्या और कठिनाई को दूर करने के लिए भगवान से प्रार्थना करना है। कुछ लोग सामान्य रूप से प्रार्थना करते हैं। कुछ प्रार्थना के माध्यम से प्रार्थना करते हैं। कुछ जप और प्रार्थना करते हैं। हर कोई किसी न किसी भगवान से प्रार्थना कर रहा है और मुझे यह समस्या हो गई! मैं कुछ नहीं कर सकता! आपको मेरा समर्थन करना होगा! बचाना! मेरे पास कोई विकल्प नहीं! ऐसा कहकर कमजोर होकर प्रार्थना कर रहे हैं। उनके साथ ऐसा व्यवहार किया जा रहा है जो कुछ नहीं कर सकते। इसके लिए भीख माँग रहा हूँ। ये उन लोगों की तरह होते हैं जो कुछ भी करने में असमर्थ होते हैं और किसी भी छोटी सी कठिनाई के तुरंत बाद गिर जाते हैं। वे ऐसे कार्य करते हैं जैसे उनके लिए कुछ भी संभव नहीं है। आज दुनिया ऐसी ही है।

लेकिन मनुष्य सर्व शक्तिमान है.. मनुष्य यह समझने में विफल रहता है कि यदि प्रयास किया जाए तो कुछ भी असंभव नहीं है। वे ही उनकी परेशानी का कारण हैं। इसके अलावा, उनकी कठिनाइयों को उनके प्रयासों से ही दूर किया जा सकता है। वे यह नहीं समझ पा रहे हैं कि केवल वे ही उनकी

समस्याओं का समाधान कर सकते हैं। लेकिन इंसानों को इस बारें में सोचना होगा।

ब्रम्हर्षि पत्री जी ने दो बातें सिखाईं जिनका अभ्यास मनुष्य को समस्याओं के समाधान के लिए करना चाहिए।

1) किसी भी कठिनाई, किसी भी समस्या को अपने स्वयं के प्रयास और स्व-कार्य से ही दूर और हल किया जा सकता है! इसका अर्थ है 'कहा जाता है कि भगवान कृष्ण ने 'उद्धरेदात्मनात्मानां' की शिक्षा दी और भगवान बुद्ध ने 'अप्पो दिपो भवः' की शिक्षा दी।

2) यह भी कहा जाता है कि किसी भी समस्या से बाहर निकलने के लिए उससे निकलने का प्रयास करने से पहले आपको समस्या का कारण जानना होगा। यह कहते हुए कि, सृष्टिवाद के प्रमुख सिद्धांतों में से एक है 'कार्या-कारण सिद्धांत' यह प्रसिद्ध रूप से समझाया गया है कि इस सृष्टि में बिना कारण के कुछ भी नहीं होता है। कोई समस्या उत्पन्न नहीं होती है। इसलिए, समस्या से बाहर निकलने से पहले, आपको समस्या का कारण जानना आवश्यक है।

हम कब जानेंगे कि समस्या की जड़ क्या है! समस्या का सही समाधान तुरंत मिल जाएगा। तो हम इस समस्या से आसानी से छुटकारा पा सकते हैं। हम फिर से वही समस्या दोहराने से बच सकते हैं। क्योंकि जब तक मूल कारण का पता नहीं चलेगा तब तक समस्या का समाधान नहीं हो सकता। इसके अलावा जब हम कारण जाने बिना मेहनत करते हैं, तो भले ही हमें समस्या से छुटकारा मिल जाता है, लेकिन हम फिर से उसी समस्या में फंस जाते हैं। कारण वही रहता है जो समस्या की जड़ है। इसलिए, क्योंकि यह तय नहीं है।

दीवार पर लगे पौधे को कितनी बार काटा जाता है और जब तक जड़ नहीं हटती तब तक जड़ें आती रहती हैं, हमारी भी समस्या आती रहती है। यदि आप इसके बारें में सोचते हैं, तो आप सृजन में 'समस्या' देखते हैं, समस्या का 'कारण' नहीं। मानव दृश्यमान बाहरी समस्या को कब तक देखता है? सिवाय, अदृश्य कारण ज्ञात या विचार नहीं है। इसलिए वे उन समस्याओं में बने रहते

हैं। बिना कुछ किए देवताओं की पूजा करना और उनकी रक्षा के लिए प्रार्थना करना।

लेकिन अगर आप इस समस्या के कारण को जानने की कोशिश करेंगे तो इसे आसानी से दूर किया जा सकता है। तो कारण पता होना चाहिए! बहादुर बनो और कोशिश करो! श्री कृष्ण ने भगवद् गीता के माध्यम से अर्जुन को यही सिखाया था। इसका अर्थ है कि अर्जुन को सिखाया गया था! न केवल अर्जुन के लिए, बल्कि सारी मानवता के लिए जैसा कि भगवान ने सिखाया है! तो आइए जानें।

भारतीय युद्ध अभी शुरू नहीं हुआ था। लेकिन अर्जुन की इच्छा के अनुसार, भगवान कृष्ण ने दोनों सेनाओं के बीच रथ को चलाया। तब शत्रुओं और शत्रु की सेना को देखकर अर्जुन भयभीत और दुखी हुआ, क्या मैं उन सबको मार डालूं? क्या मैं उन सबका सामना कर सकता हूँ? यह सोचकर कि यह युद्ध मेरे कारण नहीं है कृष्ण! उन्होंने इसे कायरों की तरह कहा। उसने अपने सारे हथियार छोड़ दिए और वहीं बैठ गया।

ठीक उसी तरह जिस दिन अर्जुन शत्रु से युद्ध करने से डरते हुए भारत के युद्ध में बैठ गए थे! इसी तरह हम भी भगवान की मूर्ति के पास, मंदिर के पास, मूर्ति के पास, जीवन के संघर्ष में समस्याओं से जूझ रहे हैं, लड़ने में असमर्थ हैं और कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। उस दिन, यदि अर्जुन वास्तव में भगवान कृष्ण के बगल में बैठे थे, तो हम उनकी आकृति और मूर्ति के पास बैठे हैं। हम उन लोगों की तरह ढह रहे हैं जो कुछ नहीं कर सकते।

सोचिए, क्या भगवान कृष्ण ने अर्जुन को अपनी शक्ति और साहस दिया था, जो इतना पराजित था? या उसने ज्ञान सिखाया और उसे बहादुर बनाया? इसका मतलब है कि भगवान ने ज्ञान दिया लेकिन अपनी शक्ति नहीं दी। मैं भी आपकी मदद करूंगा। मैं आप के लिए लड़ूंगा। मैं तुमसे लड़ूंगा, मैं तुम्हें अपने हथियार दूंगा, मैं तुम्हें अपनी ताकत दूंगा, मैं तुम्हें जीत दूंगा, मैं यह नहीं कहूंगा कि तुम मेरे पक्ष में हो। उन्होंने आत्मा के ज्ञान की शिक्षा दी और अर्जुन को उनकी शक्ति की याद दिलाई और उन्हें उनका धर्म सिखाया। उसे

कार्योन्मुख बनाया। अर्जुन, रिश्तेदार और प्रियतम की प्राप्ति के बारें में सोचो।

जब भगवान मौजूद है! यदि आप कायरों की तरह बैठेंगे, तो कुछ भी आपकी मदद नहीं करेगा!

और क्या वह हम जैसे लोगों की रक्षा करेगा, अगर हम मूर्ति से शरण ले तो भगवान हमें बचाएंगे? क्या वह समस्याओं और कठिनाइयों से बाहर निकालेगा? इसका मतलब नहीं! क्या हम मुसीबत से बाहर निकल सकते हैं? यानी यह कभी बाहर नहीं निकल सकता!

इसलिए हमें ईश्वर की शिक्षाओं को समझना चाहिए, अपने मन की क्षमताओं को जानना चाहिए और अपने प्रयासों से अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं ही करना चाहिए! हमें अपनी समस्याओं का सामना करना होगा। इसका मतलब है 'हमें खुद को आराम देना चाहिए!' ईश्वर ने यही सिखाया, पत्री जी ने जो प्रचार किया। और कोई रास्ता नहीं। कोई भगवान किसी का उद्धार नहीं करता। समर्थन नहीं करता। भगवद् गीता का सार है! श्री कृष्ण का संदेश!

उस अवसर पर भगवान ने निम्न श्लोकों के द्वारा अर्जुन से क्या कहा! आइए देखते हैं।

क्लैब्यं मास्मगमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।

क्षुदं ह्मदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप।। (भ. गी. 2-3)

हे अर्जुन! निराश मत होना (डरना) यह तुम्हें शोभा नहीं देता। इस हीन भाव अर्थात मनो दौर्बल्य को छोड़कर युद्ध करने के लिए उपयुक्त हो जाओ।

इस भजन का संदेश है! यह सिर्फ यह नहीं कहना है कि किसी को समस्याओं और कठिनाइयों से डरना नहीं चाहिए बल्कि यह बहुत बुरी बात है कि इससे डरो और मेरे कारण नहीं... भगवान का संदेश है कि हर कोई ऐसी बुरी स्थिति को छोड़ दे, कठिनाइयों का सामना करें और समस्याओं का बहादुरी से मुकाबला करें।

यदि उस दिन अर्जुन शत्रुओं का सामना न कर सका और श्री कृष्ण के सामने बैठ गया, तो यह मेरे कारण नहीं है कि आज हम उनकी मूर्ति के पास

बैठकर दीन होकर प्रार्थनाएं कर रहे है। लेकिन वास्तव में भगवान ने सिर्फ इतना कहा कि ऐसा काम नीच है। समर्थन भी नहीं किया! और अब भगवान हमारे साथ है।

क्या आप मदद करेंगे? बचाएंगे सोचना! इसलिए मनुष्य का पुरुषार्थ उन्हीं से होना चाहिए। 'उन्हें किसको आराम देना चाहिए।'
उन्होंने और क्या कहाः-

'अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाष से।
गतासूनगतासूंच नानुशोचन्ति पंडिताः।।' **(भ.गी. 2-11)**

तात्पर्य :- हे अर्जुन! आप उनके लिए शोक करते हैं जो शोक करने के योग्य नहीं हैं। ऊपर आप एक बुद्धिमान व्यक्ति की तरह बोलते हैं।विद्वान मृतक और जीवित दोनों के लिए कभी नहीं दुखित होते। जैसे अर्जुन भगवान कृष्ण के सामने विलाप करते थे, वैसे ही अब हम मूर्ति पर रो रहे हैं। अर्जुन को किसी के लिए शोक नहीं करना चाहिए! वह उनके लिए शोक करता है। साथ ही हमें किसी भी समस्या के लिए रोना नहीं चाहिए! चिंता मत करो! हमें उनकी चिंता है। हम रो रहे हैं। अर्जुन, शोक करते हुए भी, ऐसे बोलता था जैसे वह महान चीजें जानता हो।

हम भी भीख माँगते हैं, रोते हैं, और मूर्ति के आगे प्रार्थना करते हैं, और बाहर बड़े-बड़े वचन बोलते हैं। मैंने इसे हासिल कर लिया है। इतना महान, इतना महान, मैंने वह घर बनाया, मैंने यह जमीन खरीदी, यह कार मेरी है। मैंने उससे ज्यादा कमाया। मैं वह कर रहा हूं जो वह नहीं कर सकता। वह कुछ नहीं जानता। मुझे सब पता है। कितना अगर मैं इसके बारें में सोचूं तो मैं कुछ भी कर सकता हूं। आप मुझे क्या समझते हैं? असल जिंदगी में हम कई डींगें हांकते हैं। हम कितना भी कहें मूर्ति को देखते ही बैठ जाते हैं।

साथ ही भगवान का संदेश यह भी है कि विद्वान अर्थात सर्वज्ञानी कभी भी मृत या जीवित के लिए शोक नहीं करते। मतलब ये हुआ कि हम जो बाहर इतनी बातें करते हैं... हम शेखी बघारते हैं... हम जो सोचते हैं कि हम सब कुछ जानते हैं... हुई समस्या पर दुखी नहीं होना चाहिए बल्कि जो समस्या है उसके

लिए दुखी होना चाहिए? और हम मूर्ति पर शोक क्यों कर रहे हैं?

इस श्लोक के माध्यम से हम सभी के लिए ईश्वर का संदेश है कि हमें इस तरह शोक और रोना नहीं चाहिए। लेकिन उन्होंने एक बात कह रहा है तो हम अलग काम कर रहे है।

इसलिए दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। वहाँ प्रभु अर्जुन के शत्रुओं का सामना कैसे करेंगे! हमें भी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। श्रीकृष्ण ने यह भी सिखाया कि अगर ऐसे के सामने युद्ध लड़ा गया तो क्या होगा।

हतो वा प्राप्स्यसे स्वर्ग जितवा वा भोक्ष्यसे महीम।

तस्मादुत्थिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिस्चयः ।। (भ. गी. 2-37)

तात्पर्य :- अर्जुन! यदि तुम इस युद्ध में शत्रुओं द्वारा मारे जाओगे तो तुम स्वर्ग को प्राप्त करोगे। अन्यथा, यदि आप सफल हुए, तो आप राज्य पर शासन करेंगे। यह किसी भी तरह से लाभदायक है वैसे ही हम भी हमारी समस्याएं जो शत्रु है (जैसे शत्रु हमें दुःख देते है वैसे हमारी समस्याएं भी हमें शत्रु से ज्यादा दुःख देती है) युद्ध करना है। धीरज से उसका सामना करना है। ऐसे करने से हार गए तो अर्थात समस्याओं को परिष्कार नहीं कर सकते तो, ऐसे लोगों को अवश्य परलोक में स्वर्ग प्राप्ति होती है। और यदि वह जीत गया तो राज्य का सुख भोग सकेगा। जिसके पास तर्क की समस्या है वह सुख का अनुभव नहीं कर सकता। जिसके पास कोई समस्या नहीं है वह सुख का अनुभव कर सकता है। इसलिए जिन्हें परेशानी होती है उनके साथ जो होता है वह फायदेमंद होता है। लेकिन जो लोग संकट के भय से मूर्ति के पास बैठकर पूजा करते हैं, उनके लिए श्रीकृष्ण कहते हैं कि दो प्रकार की हानि होती है।

इसलिए नहीं बैठना। 'उत्तिष्ठ' मतलब उठना, समस्याओं का सामना करना, कठिनाइयों के आगे न झुकना। यह भगवान का संदेश है। आइए निम्नलिखित श्लोक को देखें।

उद्धरेदात्म नात्मानं नात्मान मवसादयेत।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मान।। (भ. गी. 6-5)

अपने आप का उद्धार करना चाहिए। लेकिन बुरे काम कर अपनी आत्मा का अपमान नहीं करना चाहिए। यदि आत्मा का अपमान करेंगे तो वही आत्मा शत्रु बनकर अपकार करेगी। अन्यथा यदि आत्मा को श्रेष्ठ माना जाता है और उसका अपमान नहीं करेंगे तो वह मित्र बनकर उपकार करता है।

यहाँ सभी को यह जान लेना चाहिए कि वह शरीर नहीं 'आत्मा' है। सब कुछ साकार है, लेकिन अशरीरी है। अर्थात शरीर धारण करने वाले। हम जीव इसलिए बने हैं क्योंकि हमने शरीर धारण किया है। यानी हम जीवात्मा बन गए हैं। भगवान ने बताया है कि ऐसे हर आत्मा, हर जीवात्मा, हर कोई अपने आप का उद्धार करना चाहिये। इसके आलावा हर समस्या से डरकर शक्तिहीन बनकर एक मूर्ति के पास बैठकर बुरी तरह से याचना नहीं करनी चाहियें।

समस्याओं का सामना करने के लिए पर्याप्त बहादुर बनों! इसे खुद ही सुलझाना है! यदि हम ऐसा करेंगे तो वह 'आत्मा' हमारी सहायता करेगी। इसके अलावा यदि आप किसी मूर्ति के पास बैठ कर उस असीम शक्ति 'आत्मा' का अपमान करते हैं तो वह आत्मा आपका अहित करेगी। यह ईश्वर का संदेश है।

संसार में गुरु, शास्त्र और ईश्वर सभी रास्ता दिखाते हैं, लेकिन चलना तो हमें ही पड़ता है! हमें अपने पैरों से चलना है। हमें अपनी आंखों से देखना होगा। हमें अपनी भूख मिटानी होगी। कोई आएगा और यह सब करेगा। हमारे प्रयास से ही सब कुछ होता है। इसलिए कहा जाता है 'भगवान उनकी मदद करता है जो खुद की मदद करते हैं' का अर्थ है 'भगवान उनकी मदद करता है जो खुद की मदद करते हैं'।

भारतीय युद्ध में भी भगवान ने युद्ध के दौरान कई अवसरों पर धर्म का सहारा लेने वाले पांडवों की मदद की। यदि हम भी आलसी लोगों की तरह मूर्ति के पास बैठ कर प्रार्थना करें, तो क्या परमेश्वर हमारी परवाह करेगा? तो मेहनत करो! कड़ी मेहनत! हमें खुद को आराम देना चाहिए! हमें अपना सर्वश्रेष्ठ करना है! यही ब्रह्मर्षि पत्री जी ने सबको सिखाया है। और क्या किया जाना चाहिए? यह एक प्रयास है। कठिन 'ध्यान' करना चाहिए। समस्या के अनुसार

अधिक मेहनत करें। यानी आपको रोजाना कई घंटे ध्यान करना चाहिए। तभी हम समस्याओं से निजात पा सकेंगे।

साथ ही दूसरी बात जो पत्री जी ने कही वह यह कि समस्या से बाहर निकलने के लिए जी-तोड़ कोशिश करना ही काफी नहीं है, घंटों-घंटों ध्यान करना भी काफी नहीं है। हमें यह जानने की जरूरत है कि वास्तविक समस्या का कारण क्या है। अगर हम इसका कारण जान लें और उसे ठीक कर लें, तो समस्या हमारे जीवन में दोबारा नहीं आएगी। हम उस समस्या से आसानी से बाहर निकल सकते हैं। यही 'भगवद् गीता' का संदेश है।

भगवान के गीता बोध के बाद अर्जुन युद्ध के लिए तैयार हो गया। युद्ध शुरू हो गया है। कौरव पक्ष का नेतृत्व करने वाले भीष्माचार्य युद्ध में फले-फूले। पांडव उसका सामना नहीं कर सके। वे अपनी सारी शक्ति के युद्धाभ्यास का उपयोग भी नहीं कर सके। अंत में, उन्हें असफलता का डर था। उन्हें कुछ नहीं करना था। वे नहीं जानते थे कि भीष्म को कैसे हराना है...कैसे मारना है...

जब वे इतने व्याकुल थे, तब श्रीकृष्ण की सलाह पर धर्मराज ने भीष्माचार्य से उनकी हार का कारण पूछा। यदि आप शिखंडी को मेरे विरुद्ध रखेंगे तो मैं युद्ध नहीं करूँगा। तभी तुम मुझे हरा सकते हो। इसके अलावा और कुछ भी संभव नहीं है, ऐसे भीष्माचार्य ने अपनी हार का कारण बताया। अगले दिन अर्जुन ने शिखंडी को अपने सामने रखकर भीष्म को आसानी से हरा दिया।

अर्थात हम भगवद् गीता से जान सकते हैं कि किसी भी समस्या का समाधान आसानी से किया जा सकता है यदि हम समस्या का कारण जान लें। साथ ही श्रीकृष्ण द्वारा द्रोण को सलाह दी गई थी कि जब तक उनका पुत्र अश्वत्थामा है, तब तक उन्हें कोई नहीं हरा सकता, तब धर्मराज ने 'अश्वत्थामा हतः' इसे जोर से कहा और 'कुंजरः' इसे धीरे से बोला। इसका मतलब है कि अश्वत्थामा मर गया है, इसे जोर से बोले और 'यह एक हाथी है' इसे धीरे से बोले। धर्मराज ऐसे कहने से द्रोणाचार्य एक पल के लिए सोच रहे तो उतनी ही समय में वे मारे गए। कई मामलों में, समस्या के कारण का पता चलते ही

समस्या को आसानी से हल किया जा सकता है। हम पता लगा सकते हैं।

साथ ही वर्तमान में मानवीय समस्याओं का एक कारण है। समस्याएँ अकारण उत्पन्न नहीं होतीं। स्वास्थ्य समस्या हो, पारिवारिक समस्या हो, वृद्धावस्था की समस्या हो या कोई अन्य समस्या हो, इसका कारण है। तो सबसे पहले आपको इसकी वजह जाननी होगी।

साथ ही ब्रह्मर्षि पत्री जी इंसानों की समस्या का मुख्य कारण बताते है। वे इसे ठीक करना चाहते हैं। वह 'हिंसा' है, 'हिंसा' मांसाहारी है। इसलिए मांसाहार वर्जित है। इसका कारण यह है कि मांसाहार करने वाले लोग कितना ही ध्यान क्यों न कर लें, उस समस्या से छुटकारा नहीं पा सकते। आप कितनी भी कोशिश कर लें, कोई फायदा नहीं होता है। अतः हिंसा का मुख्य कारण 'मांस भक्षण' है इसको छोड़ के ध्यान करना चाहिए। तब कोई भी समस्या आसानी से हल हो सकती है।

साथ ही तरह-तरह की परेशानियां भी होती हैं... उनके कारण जो भी हों! समाधान यह 'दो' है जो कारण जानकर समझा जा सकता है। इसलिए 'हिंसा बंद करो और ध्यान करो'। कोई समस्या नहीं होगी, कोई कठिनाई नहीं होगी। यह पत्री जी का संदेश है। साथ ही श्रीकृष्ण का संदेश भी।

जैसे बंधू आते जाते रहते है वैसे ही
सुख-दुःख, शीत-उष्ण, मान-अवमान भी आते जाते है।
उनकी परवाह मत करो।

भगवद् गीता में पुनर्जन्म के बारें में!

वर्तमान में, दुनिया में ज्यादातर लोग मानते हैं कि पुनर्जन्म नहीं होता है। इसका अर्थ है कि वे सोचते हैं कि मृत्यु के बाद उनका कोई जीवन नहीं है। इसलिए, वे जितना संभव हो जीवन का आनंद लेने के लिए, जितना संभव हो उतना आराम से रहने के लिए, हर किसी से बेहतर रहने के लिए, और जितना संभव हो उतना समृद्ध रहने के लिए लुभाते हैं, कोशिश कर रहे हैं।

क्योंकि उस तरह जीने के लिए सबसे जरूरी चीज है पैसा, आपके पास जितना ज्यादा पैसा होगा, आप उतना ही अच्छा महसूस करेंगे और इसलिए हर कोई पैसे कमाने को ज्यादा अहमियत देता है। कमाने के लक्ष्य के साथ जी रहे हैं। हमने कितना ज्यादा कमाया है इसे देख रहे है। लेकिन हमें यह कैसे मिला? ऐसा नहीं सोच रहा। वे कमाई के लिए ऐसे काम कर रहे हैं जो नहीं करने चाहिए। पाप होते हैं। बेईमानी करना। अधर्मी मार्ग अपनाए जाते हैं।

इसके अलावा, खाना ही इसका अनुभव करने का एकमात्र तरीका है! मैं यह भी नहीं सोचता कि मैं क्या खा रहा हूं। ऐसे खाने के लिए वे जीवन भर हिंसा कर रहे हैं। जीवित प्राणियों का मांस खाना। वे जीवन हिंसा के पाप को ढँक रहे हैं। जीवन नरक बना रहे हैं। ये अपने सुख के लिए गरीबों और कमजोरों को लूट रहे हैं। महिलाओं को प्रताड़ित करना। महिलाओं के साथ बलात्कार हो रहे हैं। आप उनके साथ ऐसा व्यवहार क्यों कर रहे हैं? अगले जन्म में तुम भोगोगे! ऐसी गलतियाँ और पाप मत करो। मांस मत खाओ, यह अत्याचार है, घोर पाप है, इनका क्या अर्थ है?

मैं मृत्यु के बाद रहती हूँ या नहीं। आप कैसे कह सकते हैं कि मेरे अभी

भी जन्म हैं? आपको क्या लगता है कि मेरे पास अभी भी जीवन है? क्या आप साबित कर सकते हो? आप कैसे कहते हैं मुझे दिखाओ वे काउंटर सवाल पूछते हैं। वे यह भी तर्क देते हैं कि वास्तविक जन्म नहीं होते हैं।

जीवन को अनुभव नहीं करते है तो यह जीवन क्यों? वास्तव में जीवन अनुभव करने के लिए है न! क्या यह जीवन है यदि आप इसे नहीं खाते हैं? मूल भगवान ने उन जानवरों को हमारे लिए बनाया है। अगर नहीं हैं तो वे किस के लिए है? ऐसे तर्क करते रहते है।

और कुछ लोग कहते हैं कि वे पैदा तो होते हैं लेकिन ऐसे नहीं जीते जैसे वे हैं। आप मरने तक कब तक सोचते हैं? तब तक, वे जीवन की तरह जीते हैं और कार्य करते हैं। वे जीवन या जन्मों के बारें में नहीं सोचते हैं। भले ही वे मानते हैं कि उनका पुनर्जन्म हुआ है, वास्तविकता यह है कि वे पुनर्जन्म के बारें में नहीं समझते हैं। ऐसे कुछ लोग सोचते है कि पुनर्जम नहीं है और कुछ लोग पुनर्जन्म को विश्वास करते हुए भी ऐसे जी रहे है कि पुनर्जन्म नहीं है।

बहुत कम प्रतिशत अभी भी पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं। पुनर्जन्म और मृत्यु के बाद जीवन के बारें में समझ इसके लिए जी रहे हैं। जीवन का आनंद लें रहे हैं।

लेकिन हर इंसान को पहले इसकी पुष्टि करनी चाहिए। क्या वास्तविक पुनर्जन्म होते हैं? क्या मृत्यु के बाद जीवन है? क्या मृत्यु के बाद मेरा अस्तित्व रहेगा? यह बहुत महत्वपूर्ण है। क्यों? पुनर्जन्म है तो जीने का भी तरीका है। पुनर्जन्म न हो तो जीने का तरीका अलग होता है। क्यों? क्योंकि यह पुनर्जन्म है, नहीं तो अभी सब जिस तरह से जी रहे हैं, उनकी गणना सही है। लेकिन अगर वे पुनर्जन्म हैं, तो हम जान सकते हैं कि उनके जीने का तरीका गलत है।

इसलिए सभी को पहले इसकी पुष्टि करनी चाहिए। क्या वास्तविक पुनर्जन्म होते हैं?

क्योंकि जब पुनर्जन्म होते हैं, जब हमारे पास मृत्यु के बाद जीवन होता है, तो हमारे पास सोचने और करने के लिए बहुत कुछ होता है। मरने के बाद क्या होता है? कहाँ जाते है? कहाँ रहते है? कितने दिन के लिए रहते है? क्या

करते है? फिर कब भूलोक को आते है? फिर कहा जन्म लेते है? कैसे जन्म लेते है? किस देश में, किस क्षेत्र में, किस धर्म में, किस जाती में, स्त्री के रूप में, पुरुष के रूप में, अमीर जैसे, गरीब जैसे, स्वस्थ या बीमार, मेधावी जैसे, झुण्ड दिमाग जैसे, वह जो सब कुछ है, बाद में जीवन कैसा होगा ? इन सभी विषय के बारे में सोचना है। कारण यह है कि जन्म का संबंध इस जन्म से है। कारण यह है कि जब पुनर्जन्म होता है, तो इस जीवन में किए गए कार्यों के आधार पर पुनर्जन्म होता है। इसलिए इस मामले को अच्छी तरह सोच-विचार कर लेना चाहिए। पहले व्यक्ति को पुनर्जन्म की पुष्टि करनी होती है।

क्योंकि जब वे समझते हैं कि पुनर्जन्म होते हैं, जो यह समझते हैं कि इस जन्म में किए गए कर्मों को अगले जन्म में भोगना होगा और फिर से ऐसा जन्म लेना होगा, वे इतने पाप नहीं करेंगे, किसी को धोखा नहीं देंगे, आत्महत्या नहीं करेंगे। कोई बलात्कार, अराजकता, मानव दुर्व्यवहार, कोई हिंसा, कोई जाति, धर्म, क्षेत्रीय विवाद और संघर्ष नहीं होगा। राष्ट्रों के बीच कोई युद्ध नहीं होगा। युद्धों के लिए धन की कोई बड़ी हानि नहीं होती है। इस तरह के लोगों में हम दुनिया में कई बदलाव देख सकते हैं। मनुष्य द्वारा किए गए सभी कार्य विश्व के कल्याण के लिए होते हैं। दुनिया शांति पर है।

यह सब जब आप समझते हैं कि पुनर्जन्म होते हैं। तो क्या पुनर्जन्म होते हैं? या नहीं? यह बात को जानने कि और निर्धारित करने कि आवस्यकता है। आइए इसके बारें में थोड़ी बात करते हैं।

मानव व्यवहार, शब्द नहीं, बल्कि कुछ चीजें जो लोग विश्वास के साथ करते हैं, संकेत करते हैं कि पुनर्जन्म होते हैं। इंसानों में जन्म से ही ये अंतर क्यों होते हैं? इसका मतलब है कि उसने अपने पिछले जीवन में क्या किया था। क्या इसका मतलब यह है कि जन्म होते हैं? इसी तरह, हिंदू अपने माता-पिता के मरने पर उनके नाम पर कर्मकांड करते हैं, यह मानते हुए कि पुनर्जन्म होते हैं और मृत्यु के बाद भी वे वहीं रहेंगे, है न? इससे ज्ञात होता है कि मृत्यु के बाद भी जीवन है और पुनर्जन्म भी होते हैं!

इसके अलावा, सभी धर्म मानते हैं कि देवता हैं। सभी देवताओं को महान माना गया है। भले ही देवता मर जाएं; भले ही उनका शरीर मौजूद नहीं है और उन्हें देखा नहीं जा सकता है, फिर भी माना जाता है कि वे वहां हैं। क्या इसका मतलब यह है कि वे मृत्यु के बाद वहां हैं? इसी प्रकार जिन मनुष्यों ने शरीर धारण किया है, वे भी मृत्यु के बाद शरीर न होने पर भी विद्यमान रहते हैं, है न? देवता महान हैं और वापस नहीं आते। लेकिन मनुष्य पाप करते हैं और उन्हें भोगने के लिए दूसरे शरीर के साथ पृथ्वी पर आते हैं। इस प्रकार दूसरा शरीर धारण करना पुनर्जन्म कहलाता है। क्या इसका मतलब यह है कि पुनर्जन्म होते हैं?

इसके अलावा, हर कोई मानता है कि भगवान कृष्ण एक भगवान और एक अवतारी पुरुष हैं। मंदिर बनाए जाते हैं और पूजा की जाती है। मंदिर बनाए जाते हैं और मूर्तियों की पूजा की जाती है। ऐसा माना जाता है कि अनंत शक्ति अवतार हैं। कहा जाता है कि वह कुछ नहीं जानता। भगवान कृष्ण ने जो कहा वह सभी के लिए मानक है? और भगवान कृष्ण ने भगवद् गीता में कहा कि हमारा पुनर्जन्म होता है? यानी उन्होंने इतना जरूर कहा कि सभी का पुनर्जन्म होता है। इसका उल्लेख भगवद् गीता में कई बार किया गया है।

आइए समझने के लिए भगवद् गीता के कुछ श्लोकों को देखें:

देहिनोस्मिन यथा देहे कौमारं यौवनं ज़रा ।

तथा देहान्तर प्राप्तिर्धीर स्तत्र न मुह्यति ।। (भ. गी. 2-13)

तात्पर्य:- जिस प्रकार मानव शरीर में बचपन, जवानी और बुढ़ापा अवश्यम्भावी होता है, उसी प्रकार मृत्यु के बाद दूसरा शरीर भी होता है। अतः इस विषय में ज्ञानी व्यक्ति को कामवासना की कोई मात्रा प्राप्त नहीं होती।

यह भगवान कृष्ण द्वारा बहुत स्पष्ट और निश्चित रूप से कहा गया था कि पुनर्जन्म होते हैं। इसके अलावा, एक इंसान एक शरीर नहीं है। कहा जाता है कि जिस 'आत्मा' के कारण इस शरीर का अस्तित्व है, वह मनुष्य है। कहा गया है कि शरीर आत्मा द्वारा पहने जाने वाले वस्त्र के समान है।

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा न्यन्यानि संयाति नवानि देहि।।

(भ.गी. 2-22)

तात्पर्य :- जिस प्रकार मनुष्य पुराने फटे-पुराने वस्त्रों को पहनकर नए वस्त्र धारण करता है, उसी प्रकार वह पुराने शरीर को त्याग कर नया शरीर धारण करता है।

भगवान कृष्ण ने कहा कि 'मनुष्य' अर्थात 'आत्मा' मरती नहीं है। निम्न श्लोक से भी स्पष्ट होता है।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकाः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुत :।। (भ. गी. 2-23)

आत्मा को शस्त्रों से छेदा नहीं जा सकता और न ही अग्नि उसे भस्म कर सकती है। पानी नहीं बुझा सकती, और वायु नहीं बुझा सकती। यानी हमारी कोई मृत्यु नहीं है। कहा जाता है कि हम जो शरीर धारण करते हैं, वही मरता है। इस प्रकार उन्होंने कहा कि 'शरीर को धारण करना जन्म है और शरीर को छोड़ना मृत्यु है।' इसलिए, निम्नलिखित श्लोक के माध्यम से यह बताया गया है कि पूछताछ करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि कोई भी मरा नहीं है।

जातस्यहि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
तस्मादपरिहार्येर्थे न त्वम् शोचितु मर्हसि।। (भ.गी. 2-27)

तात्पर्य :- जो जन्मा है उसे मरना अवश्य है। एक मृत व्यक्ति पैदा नहीं हो सकता।

पुनर्जन्म के विषय में यह स्पष्ट किया गया है कि इस विषय में तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए। इतना ही नहीं, हमें इस जीवन में क्या करना चाहिए? आप इस जीवन में क्या करते हैं, अगले जन्म में आपको क्या मिलेगा? प्रभु ने भी यही कहा था। उन्होंने सभी को 'ध्यान योगी' बनने के लिए कहा। जो ऐसा ध्यान करता है वह योगी बन जाता है। इस श्लोक के माध्यम से कहा गया है कि वह सबसे महान है।

तपस्विभ्योधिको योगी ज्ञानिभ्योपि मतोधिकः।

कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ।। (भ.गी. 6-46)

तात्पर्यः- एक योगी, एक तपस्वी (जो जप करता है, तपस्या करता है) से बड़ा है। एक योगी एक ज्ञानी से श्रेष्ठ है (जिसके पास किताबी ज्ञान, विद्वतापूर्ण ज्ञान है)। कर्मकाण्ड (नित्य, नैमित्तिक कर्म अर्थात संध्या, सूर्य नमस्कार जैसे यज्ञ, कर्म) करने वाले से योगी बड़ा है। इसलिए अर्जुन ध्यान योगी बनो।

भगवान कृष्ण ने अर्जुन के नाम से हम सभी को एक संदेश दिया है। तब अर्जुन ने भगवान से कहा, 'मैं आपके कहे अनुसार ध्यान करूंगा। मैं योग प्राप्त करने की कोशिश करूंगा। लेकिन अगर मुझे अभ्यास पूरा होने से पहले शरीर छोड़ना पड़े तो मुझे क्या होगा?' जब पूछा गया, भगवान कृष्ण ऐसा कहते है।

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।

शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोभिजायते।। (भ.गी. 6-41)

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमतां।

एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशं ।। (भ.गी. 6-42)

तात्पर्य :- ऐसा 'योगभ्रष्ट' (जो योगाभ्यास के बीच में शरीर को छोड़ देता है।) मृत्यु के बाद पुण्यात्माओं के लोक को प्राप्त करता है, वहाँ कई वर्षों तक रहता है, और फिर एक साधु के घर में जन्म लेता है। या वह बुद्धिमान योगियों के परिवार में पैदा हुआ है।

भगवान कृष्ण ने कहा कि इस दुनिया में ऐसी जन्म प्राप्त होना बहुत दुर्लभ है। जिन्होंने योग का अभ्यास किया है, अर्थात जिन्होंने ध्यान किया है, वे अगले जन्म में एक महान स्थिति प्राप्त करेंगे और इस प्रकार मोक्ष प्राप्त करेंगे। इसके अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि पुनर्जन्म होते हैं! साथ ही निम्न सूक्त के माध्यम से कहा गया है कि मनुष्यों का ही नहीं, देवताओं का भी जन्म होता है।

बहूनि में व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन

तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वम् वेत्थ परन्तप। (भ. गी. 4-5)

तात्पर्य- हे अर्जुन, तुम्हारे और मेरे कई जन्म हो चुके हैं। मैं उन्हें जानता हूं लेकिन आप नहीं।

कहा जाता है कि हर कोई ऐसे ही पैदा होता है। इतना ही नहीं!

निम्नलिखित श्लोकों के माध्यम से यह भी कहा गया है कि यदि आप इसे करते हैं, तो आप बिना किसी जन्म के भी कर सकते हैं।

आ ब्रम्ह भुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोर्जुन।

मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते।। (भ. गी. 8-16)

तात्पर्यः - हे अर्जुन, भले ही तुम ब्र्म्मलोक जैसे लोकों में पहुँच जाओ, तुम्हें फिर से जन्म लेना होगा! लेकिन यदि जिस लोक में रहते हो उस लोक इ्सत्यलोकट को पहुँचने पर, मतलब मुझे पाने से फिर पुनर्जन्म नहीं होगा।

उपरोक्त श्लोक के अनुसार कहा गया है कि जो लोग ईश्वर को प्राप्त कर लेते हैं उनका दोबारा जन्म नहीं होता। उन्होंने यह भी बताया कि यह कब और कैसे संभव है।

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।

वासुदेवसर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभ :।। (भ.गी. 7-19)

तात्पर्य - अनेक जन्मों के अन्त में मनुष्य ज्ञानी हो जाता है और मुझे इस ज्ञान से प्राप्त होता है कि सब कुछ वासुदेव (ईश्वर) है। ऐसे महात्मा संसार में बहुत कम होते हैं।

जन्म कर्म च में दिव्य मेवं यो वेत्ति तत्वतः।

त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोर्जुन।। (भ. गी. 4-9)

तात्पर्य :- अर्जुन! वह जो वास्तव में मेरे दिव्य जन्म और कर्म के बारें में जानता है, मृत्यु के बाद वापस आ जाएगा।

वह अभी पैदा नहीं हुआ है।

इसके अनुसार कहा जाता है कि जिन्होंने योगाभ्यास किया है अर्थात जिन्होंने ध्यान किया है, वे ईश्वर का ज्ञान प्राप्त करते हैं, उनके पास पहुँचते हैं और मोक्ष प्राप्त करते हैं, और यह भी कहा जाता है कि ऐसे लोग दुनिया में

बहुत कम होते हैं। यह भी कहा गया है कि बहुत कम लोग होते हैं जो यह सब समझते हैं और ध्यान करते हैं।

उपरोक्त श्लोकों के माध्यम से हम जान सकते हैं कि सभी के पास ज्ञान है कि यहां किए गए कर्मों के कारण उन्हें ऊपरी लोकों में स्थान मिलेगा और वे फिर से पृथ्वी पर जन्म लेंगे, और जो 'ध्यानयोगी' है वह अंततः भगवान को प्राप्त करेगा और अनादि मोक्ष की स्थिति के बारें में हम भगवान कृष्ण के संदेश से जान सकते हैं। इसलिए भगवान ने कहा कि 'पुनर्जन्म' होते हैं। यह भी कहा जाता था कि मृत्यु के बाद भी जीवन होता है। यह भी कहा गया है कि मनुष्य को 'ध्यान' करना चाहिए।

परन्तु पुनर्जन्म नहीं होता और अपनी मर्जी से रहना, दुष्टता करना, छल करना, हिंसा करना, मांस खाना और बढ़ते हुए पाप करना ऐसा सोचना, न केवल वह जन्म बल्कि अगला जीवन भी नरक होगा। हम इतने सारे लोगों को देखते हैं जो रो रहे हैं कि मैं नहीं चाहता कि यह दर्द इतनी तकलीफों और असहनीय बीमारियों के साथ हो। उन सभी को यह दुर्भाग्य क्यों सहना पड़ा? पुनर्जन्म के बिना जीने के बारें में क्या?

इसलिए जान लें कि पुनर्जन्म होते हैं। साथ ही जीवन में दुखों से मुक्ति पाने के लिए 'ध्यान' करना चाहिए और ध्यान न करने पर यह भी जान लेना चाहिए कि जन्मों-जन्मों का योग छूट जाता है।

समझ गए 'जन्म से परे! ध्यान से जन्म से मुक्त होने के लिए!'

'मैं मर जाऊँगा, मैं मर जाऊँगा, मैं मर जाऊंगा' -
ऐसे क्यों कहते है ? मृत्यु के बाद भी
'मैं रहूँगा, मैं रहूंगा, मैं रहूँगा '
इस सत्य को क्यों नही पहचान रहे हो?

भगवद् गीता में कर्म के बारें में!

प्रस्तुत में कुछ लोग तर्क कर रहे है कि कर्म सिद्धांत नहीं है, ऐसे भी कह रहे है कि कर्म ही नहीं है। इससे बहुत सारे लोग भ्रमित हो रहे है। क्या कर्म है या नहीं? इस संदेह में फस गए है।

तो आइए जानते हैं इन कर्मों के बारें में और कर्म सिद्धांत के बारें में। क्या वास्तविक कर्म हैं? क्या यह नहीं कहा जाना चाहिए कि यह निश्चित रूप से है।

कर्म का एक सिद्धांत क्यों है? प्रश्न पूछने से पहले, क्या हम वास्तव में मौजूद हैं? क्या इसका मतलब है कि हम निश्चित हैं! और हम कहाँ हैं? अगर आप पूछें, हमारे घर में? या हमारे दिल में? जिले में? राज्य में? देश में? या इस देश में? इसका अर्थ है कि हम इन सब में ही नहीं बल्कि इस सृष्टि में भी हैं। और इस सृष्टि की रचना किसने की? इसका अर्थ यह है कि सभी कहते हैं कि कोई शक्ति है जिसे हम नहीं जानते, जिसे हम नहीं देखते। नास्तिक और आस्तिक दोनों इस बात से सहमत हैं कि सृष्टि एक शक्ति के कारण हुई थी। उस शक्ति को भी अलग-अलग धर्म अलग-अलग नामों से पुकारते हैं!

कोई कहता है 'अल्लाह'। कोई कहता है 'मेरे पिता', कोई कहता है 'ईश्वर', कोई कहता है 'परमात्मा', 'परब्रम्ह', 'पराशक्ति'।

वैसे भी उस शक्ति का अर्थ है कि यह सृष्टि ईश्वर ने बनाई है। इसके अलावा, यह सृष्टि कुछ नियमों द्वारा शासित है। बड़े-बुजुर्ग कहते हैं कि वे नियम 'पुण्य' हैं।

अर्थात मनुष्य सहित इस सृष्टि में रहने वाले प्रत्येक प्राणी को उन

'सृजन धर्मों' के अनुसार रहना चाहिए! रहते हुए भी! इसका अर्थ है कि किसी भी मनुष्य को इन 'सृष्टि के गुणों' के अधीन होना चाहिए! अर्थात उसके अनुसार कार्य करना चाहिए! अर्थात कर्म करना है! यदि नहीं, तो आपको सृष्टि के गुणों के अनुसार दंड भुगतना होगा! अनुभव भी! वे दंड, वे कठिनाइयाँ हैं जो मनुष्य को आती हैं।

इसलिए कहा जाता है 'धर्मो रक्षति रक्षितः'। इसका अर्थ है 'यदि आप धर्म की रक्षा करते हैं तो आप बचेंगे' इसका अर्थ है कि यदि आप धर्म के अनुसार रहते हैं तो आपको नुकसान नहीं होगा, यदि आप धर्म का उल्लंघन करते हैं, अर्थात यदि आप धर्म के विरुद्ध कर्म करते हैं, तो आपको दंड भोगना पड़ेगा, जिसका अर्थ है 'आप जो भी कर्म करते हैं, ऐसा परिणाम होता है' सृष्टि की धर्म सूक्ष्मताओं को जानें कि आपको इसे उसी के अनुसार अनुभव करना होगा। इससे यह निश्चित है कि इस सृष्टि में एक 'कर्म सिद्धांत' है।

जो किसी देश या राज्य में नहीं हैं वे उस राज्य के शासनादेश और कानूनों के अनुसार कैसे रह सकते हैं! नियमों का उल्लंघन करने के लिए दंड कैसे हैं? साथ ही जो इस सृष्टि में हैं, सृष्टि के धर्म के अनुसार, यदि वे धर्म के विपरीत कार्य करते हैं, तो उन्हें दंडित किया जाएगा। यानी किए गए कर्मों के आधार पर ही फल मिलता है। अर्थात 'कर्म' होते हैं। यह स्पष्ट है कि एक 'कर्म सिद्धांत' है।

इसके अलावा हम 'कर्म सिद्धांत' के लिए योगियों और शास्त्रों को मानक के रूप में ले सकते है।

शास्त्र कहते है कि -

'पूर्व जन्म कृतं पापं व्याधि रूपेण पीड्यते !'

पूर्व जन्म में किये हुए पाप के कारण वे रोग रूप में पीड़ित होते है।

यानी कर्म के आधार पर रोग के रूप में फल तो भोगना ही पड़ता है न? अर्थात कर्म का सिद्धांत है!

और शास्त्रों के अनुसार स्पष्ट है कि कर्म 3 प्रकार के होते हैं। वे हैं

1) संचयी कर्म 2) प्रारब्ध कर्म 2) आगामी कर्म (वर्तमान कर्म)। हमें यह जान लेना चाहिए कि जब तक ये कर्म रहेंगे तब तक जन्म लेकर इनका फल भोगना हीं पड़ेगा।

इसके अलावा, किसी को यह महसूस करना चाहिए कि अगर कोई ऐसा काम करता है जो नहीं किया जाना चाहिए, जैसे डकैती, मानव दुर्व्यवहार, हत्याएं, धोखाधड़ी, जीवन के लिए हिंसा, मांस खाना, तो जीवन नारकीय हो जाएगा।

सोचिए 99 प्रतिशत सभी मनुष्यों का मानना है कि ईश्वर का अस्तित्व है। सभी धर्म भी मानते हैं। यह भी कहा जाता है कि हर कोई भगवान के बराबर है। क्या सभी का जीवन एक जैसा है? यह कहा जाना चाहिए कि यह निश्चित रूप से नहीं है। और ये सब भेद क्यों हैं? पूछे जाने पर कहेंगे कि यह निश्चित रूप से उनके कर्मों के कारण है।

और 'जिसने यह किया है उसकी जय हो!' वैज्ञानिक मुहावरा भी कहा जाता है। यह भी ध्यान दें कि वे कितनी भी पूजा-पाठ कर लें, अगर उनकी मुश्किलें हल नहीं होंगी तो उनके कर्म कहां जाएंगे? यह कहा जाता है साथ ही अगर किसी के साथ कठिन समय चल रहा है; कहा जाता है और कोई कितना भी कहे न माने तो कहते हैं 'तेरा कर्म! तुझे कोई नहीं बचा सकता'। और कोई लाख कोशिश करके भी साथ न आये तो उसे अपशकुन कहा जाता है। अगर कोई साथ हो जाए तो उसे खुशनसीब कहा जाता है। ये सब कर्म हैं जो उन्होंने अतीत में किए हैं!

कोई भी अच्छे कर्म कर सकता है और अच्छा व्यवहार कर सकता है। उन्हें पवित्र अनुष्ठान करने के लिए कहा जाता है। क्या इसका मतलब अच्छे कर्म करना है? किसलिए क्या यह अच्छे के लिए नहीं है? एक बेहतर भविष्य के लिए, जीवन में बेहतर परिणाम के लिए? यानी अच्छे कर्म करने से अच्छा फल मिलेगा।

अगर कोई कर्म नहीं है, कर्म सिद्धांत नहीं है, किये हुए कर्मों के फल नहीं होते तो दुनिया में सभी मानव पूजाएं, प्रार्थनाएं, नमाज क्यों कर रहे है?

उनसे किये हुए कर्मों का फल क्यों मांग रहे है? जब फल कि अपेक्षा कर रहे है तो कर्मों के फल होते है न! कर्म सिद्धांत रहेगा न!

हम पुराणों में भी शिक्षित हैं। हिंसक कर्म करने वाले राक्षसों को दंडित और नष्ट किया जाता है, अच्छे कर्म करने वाले साधु संतों को बचाया जाता है। यह स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है कि समस्त सृष्टि कर्म के सिद्धांत पर आधारित है। यह कहना कि कर्म नहीं है और कर्म का कोई सिद्धांत नहीं है, मूर्खों की बातें हैं। उन शब्दों का इस्तेमाल समाज को गुमराह करने और इंसानों को राक्षस बनाने के लिए किया जाता है। लेकिन इसमें कोई सच्चाई नहीं है। **विशेष रूप से, देखते हैं कि निम्नलिखित योगी क्या हैं:-**

ब्रह्मर्षि वशिष्ठ :- जो कोई जैसे करते हैं वह वैसे ही उसका फल भोगता है। पूर्व जन्म के जो सकर्म है वही 'दिव्य' और 'प्रारब्ध' कहा जाता है। इसलिए उनके खुद के किये गये कर्म के अलावा कोई भगवान या प्रारब्ध ऐसे कुछ नहीं है।

गौतम बुद्ध :-

उन्होंने कर्म के सिद्धांत के बारें में कहा, 'जब कोई पाप करता है, तो वह खुशी महसूस करता है, लेकिन जब कोई उस पाप का परिणाम भुगतता है, तो जीवन दुखी हो जाता है।'

यीशु मसीह :-

'जो बोओगे वही काटोगे'। अर्थात जैसा कर्म किया जाता है, वैसा ही फल होता है। यह कहा गया था कि आप इसे अनुभव करेंगे।

श्री रामकृष्ण परमहंस :-

कहते हैं, 'हम जैसा कर्म करते हैं वैसा फल हमें भोगना ही पड़ता है।' मिर्च खाएंगे तो मुंह जल जाएगा। चीनी खाओगे तो मुँह मीठा हो जायेगा!

गुरु साहेब :-

'कर्म का सिद्धांत प्रकृति की अपरिवर्तनीय शाश्वतता है। कानून यह व्यक्ति के पिछले और आध्यात्मिक जीवन के लिए नींव है'।

उन्होंने कर्म सिद्धांत के बारे में और भी कहा है कि एक आदमी जो कुछ दिन-रात में करता है, वही उनके नसीब में लिखा जाता है।

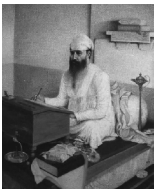

भाई गुरदास :-

अच्छा करोगे तो बुरा नहीं मिलेगा, बुरा करोगे तो अच्छा नहीं होगा।

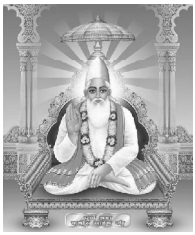

कबीर :-

कर्म सिद्धांत के बारें में कहा जाता है कि 'जिसने भी कर्म किया है वह उसका भोग करेगा'। उन्होंने कहा, 'जो हाथ कर्म करता है, वह उस कर्म का फल भोगता है।' उन्होंने कहा कि कर्म होते हैं।

गुरु रविदास :-

'एक आदमी को यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि उसके कर्मों का एक समय या किसी अन्य पर परिणाम होगा'।

ब्रह्मर्षि पत्री जी

कर्म के सिद्धांत को कई मौकों पर कई अलग-अलग तरीकों से कहा गया है।

1) सृष्टि के सिद्धांतों में:- 1) आत्मा का सिद्धांत 2) पुनर्जन्म का सिद्धांत 3) कर्म का सिद्धांत कहा जाता है कि और भी कई सिद्धांत हैं और विशेष रूप से 'कर्म सिद्धांत' के बारें में 'आध्यात्मिक

शास्त्र' नाम के पुस्तक में बताया गया। उन्होंने जो कहा वह यह है कि '**हम किसी भी प्रकार का कर्म करते हैं, समय और स्थान निश्चित रूप से फल की ओर ले जाते हैं**'।

यह भी कहा गया है कि यदि आप पाप करते हैं, तो आपको छोटे-छोटे रोग होंगे, यदि आप विभिन्न प्रकार के पाप करते हैं, तो आपको विभिन्न प्रकार के रोग होंगे।

इसलिए **मांसाहार छोड़ो और शाकाहारी भोजन ग्रहण करो** वे बड़ी दृढ़ता से कहते हैं।

इसके अलावा यह कहा है कि '**आपके मुँह के शब्द आपके माथे के लेखन है**' और आपका भविष्य आपके शब्दों पर निर्भर करता है।

वे कह रहे हैं कि.. उन्होंने यह भी कहा '**अच्छे परिणाम अच्छे होते हैं और बुरे परिणाम बुरे परिणाम होते हैं**'। वे यह भी कह रहे हैं कि फल मिलेगा।

इस प्रकार पत्री जी ने अनेक अवसरों पर 'कर्म सिद्धांत' और 'कर्म' का उल्लेख किया है। उन्होंने कहा कि कर्म हैं। लेकिन कुछ लोग कहते हैं कि 'कर्म सिद्धांत' नहीं है, उन्हें वास्तव में क्या कहना चाहिए?

श्रीकृष्ण परमात्मा

हर कोई उस महान की पूजा और आराधना कर रहा है। और भगवद् गीता के माध्यम से उनका संदेश सभी के लिए मानक है! क्या उन्होंने कहा कि कर्म हैं? उन्होंने कहा कि वे निश्चित रूप से वहां हैं। इसके अलावा, पाप कर्मों के कारण दुःख होता है। ऐसा दुःख दूर करने के लिए क्या करें! उन्होंने यह भी बताया कि उन कर्मों के कष्टों से कैसे छुटकारा पाया जा सकता है। और यदि कर्म करने के बाद भी कर्म न जुड़े हों, तो ऐसा कैसे हो सकता है कि कर्म करने के बाद भी कर्म न हो? यह किस संदर्भ में लागू होता है? यह भी कहा था। आइए नजर डालते हैं उन बातों पर।

विशेषकर निम्नलिखित श्लोकों से यह स्पष्ट होता है कि कार्य हैं।

काङ्क्षतः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः।

क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा।। (भ. गी. 4-12)

तात्पर्य : मनुष्य जो कर्मों के फल की इच्छा रखते हैं वे इस संसार में देवताओं की पूजा करते हैं। क्योंकि इस मनुष्य लोक में कर्मफलसिद्धि जल्दी होती है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्माते सङ्गोस्त्व कर्मणि।। (भ. गी. 2-47)

तात्पर्य :- अर्जुन! आपके पास कर्म करने का अधिकार है। लेकिन आप को कर्म के फल की अपेक्षा करने का अधिकार नहीं है। आप कर्म फल का कारण नहीं हो सकते। कर्म न करने में आसक्ति नहीं रखों।

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शांतिमाप्नोति नैष्टिकीम

अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते। (भ.गी. 5-12)

तात्पर्यः- एक योगी (निष्कामकर्मयोगी) कर्म के फल को त्याग देता है और परम शाश्वत शांति को प्राप्त करता है। एक व्यक्ति जो योग के योग्य नहीं है, वह इच्छा से प्रभावित होता है और कर्मफलमन्दशक्ति के जाल में फँस जाता है।

श्रेयोहि ज्ञानमभ्यासात ज्ञानाध्यानं विशिष्यते।

धयानातकर्मफलत्यागाः त्यागाच्छान्तिरनन्तरं।। (भ.गी. 12-12)

तात्पर्यः ज्ञविवेकपूर्वकट अभ्यास से बेहतर ज्ञवैज्ञानिकट ज्ञान श्रेष्ठ है। ज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है। ध्यान ज्ञनिर्विषय मनःस्थितिट से कर्मा फल को त्यागना बेहतर है। ऐसे कर्म फल के त्याग से शीघ्र शान्ति लभ्य हो रहा है।

सक्ता कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।

कुर्याद्विद्वां स्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम।। (भ.गी. 3-25)

हे अर्जुन! अज्ञानी लोग कर्म में कैसे फंस जाते हैं और फल की तलाश कैसे करते हैं? जो लोग ऐसा कर रहे हैं, वैसे ही ज्ञानी इससे प्रभावित नहीं होंगे।

वे स्वतंत्र हैं और दुनिया के कल्याण के लिए गतिविधियों में लगे हुए हैं।

उपरोक्त श्लोकों में यह बहुत स्पष्ट रूप से कहा गया है कि भगवान

कृष्ण के कर्म हैं और उनके परिणाम हैं। इसके अलावा, उन्होंने कहा कि कर्म के फल की अपेक्षा न करें, बल्कि कर्म के फल का त्याग करें। साथ ही यह भी बताया कि अज्ञानी किस प्रकार कर्मों में फँसते हैं और ज्ञानियों को कर्मों में फँसे बिना शान्ति कैसे प्राप्त होती है। यह भी कहा जाता है कि कर्मफल का त्याग किसी भी अन्य वस्तु से श्रेष्ठ है।

उन्होंने यह भी बताया कि जो कर्मों में फंसे हुए हैं, उन कर्मों से कैसे छुटकारा पाया जाए और उन कर्मों से कैसे बाहर निकला जाए।

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः।

श्रद्धावन्तो नसूयन्तो मुच्यन्ते तेपि कर्मभिः।। (भ. गी. 3-31)

तात्पर्यः- अर्जुन! जिस प्रकार एक अच्छी तरह से प्रज्वलित अग्नि लकड़ी को जलाकर राख कर देती है, उसी प्रकार अग्नि ज्ञान और सभी कर्मों को जला देती है।

यज्ञ शिष्टाशिनस्सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः।

भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात।। (भ. गी. 3-13)

तात्पर्यः- यज्ञ के शेष भाग को खाने वाले सज्जन समस्त पापों से मुक्त हो जाते हैं। लेकिन अगर अपने शरीर के पोषण मात्र ही कौन चावल पकाते हैं, वे पाप खा रहा है।

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः।

श्रद्धावन्तो नसूयन्तो मुच्यन्ते तेपि कर्मभिः।। (भ.गी. 3-31)

तात्पर्य :- जो पुरुष परिश्रमी, द्वेषरहित और सदैव मेरे विचारों का पालन करने वाले हैं, वे कर्मबन्धन से मुक्त हो जाते हैं।

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः।

सर्व ज्ञानप्लवेनैव वृजिनम सन्तरिष्यसि।। (भ.गी. 4-36)

तात्पर्यः- (यदि) आप सभी पापियों से अधिक पाप करने वाले हैं, और आप नाव के ज्ञान से ही उस सारे पापों के समुद्र को पार कर सकते हैं।

इतना ही नहीं, वे कर्म कब नहीं रहेंगे? कर्म का वह सिद्धांत मनुष्य पर कभी लागू नहीं होता! वह निम्नलिखित श्लोकों में भी सूचित करता है।

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः।

लिप्यते न स पापेन पद्म पत्र मिवाम्बसा।। (भ.गी. 5-10)

वह जो अपने कर्मों को सर्वोच्च के लिए समर्पित करता है और संगम (स्रचि) को त्याग देता है, वह कमल के पानी से नहीं छूता है और न ही पाप से। नहीं चिपकेगा।

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः।

कर्मण्यभिप्रवृत्तोपि नैव किंचित्करोति सः।। (भ. गी. 4-20)

वह जो निरंतर कर्म के फल से संतुष्ट रहता है और किसी चीज का सहारा नहीं लेता, ऐसा व्यक्ति कर्म में कर्म करता है और कुछ नहीं करता।

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।

इति मां योभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते।। (भ. गी. 4-14)

तात्पर्यः- मैं कर्म से बंधा नहीं हूँ। मेरे पास कर्मफल अपेक्षा भी नहीं है। जो इस मार्ग को जानता है वह कर्म से बंधा नहीं है।

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहंः।

शारीरक केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषं।। (भ.गी. 4-21)

तात्पर्यः वह जिसके पास कोई आशा नहीं है, जो इंद्रियों और इंद्रियों को रोकता है, मनुष्य जो कुछ भी अनुभव नहीं करता है वह शरीर द्वारा कर्म है। उसे पाप नहीं मिलता।

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।

समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते।। (भ. गी.4-22)

तात्पर्य :- जो न चाहते हुए भी प्राप्त होने पर संतुष्ट है, जो सुख-दुःख के द्वैत से परे है, जिसमें ईर्ष्या नहीं है, जो सिद्धि और अप्राप्ति में समान है (या कार्य सिद्धि हो या नहीं, समभाव से रहता है), ऐसे मनुज कर्म करने पर भी बंधित नहीं होते।

योगसंन्यस्त कर्माणां ज्ञान सञ्चिन्न संशयं।

आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनंजय।। (भ.गी. 4-41)

तात्पर्यः- हे अर्जुन! जिसने निष्काम कर्मयोगद्वारा कर्मफल का परित्याग कर दिया है, या जिसने भगवान को अर्पण कर दिया है, और जिसने ज्ञान द्वारा अपने संदेहों को दूर कर लिया है, वे आत्मनिष्ठ (ब्रह्मण) के कर्म हैं।

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।

सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते।। (भ.गी. 5-7)

तात्पर्यः- निष्काम कर्म योग का अभ्यास करने वाला, निर्मल ह्मदय वाला, प्रबुद्ध मन वाला, इन्द्रियों को जीत लेने वाला, जो जानता है कि सभी जीवों की आत्मा एक है, वह मनुष्य जो कर्म पर विजय प्राप्त करता है उन से बंधित नहीं होता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट कहा गया है कि कर्म किसी भी दशा में... इसके अलावा, यह कहीं भी नहीं कहा गया है कि कोई वास्तविक 'कर्म' नहीं है और कोई 'कर्मसिद्धांत' नहीं है। यह कहना मूर्खता के सिवा और क्या है?

क्या वे भगवान कृष्ण से बड़े हैं? पत्री जी से बेहतर? इसके अलावा, भगवान कृष्ण ने यह भी कहाः

किं कर्म किमकर्मेति कवयोप्यत्र मोहिताः।

तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ञात्वा मोक्ष्यसेशुभात।। (भ.गी. 4-16)

विद्वानों ने भी इस बात को ठीक से नहीं समझा है कि कर्म क्या है और अकर्म क्या है। अब मैं आपको कर्म का रहस्य बता रहा हूं कि आप सभी चीजों के बंधन से मुक्त हो सकते हैं।

भगवान श्रीकृष्ण ने स्वयं कहा था कि कर्म और अकर्म के बारें में ज्ञानी जैसे लोग नहीं जान पाते हैं, लेकिन साधारण लोग, बहुत सीमित ज्ञान वाले अज्ञानी और मूर्ख लोग कर्म और 'कर्म सिद्धांत' के बारें में क्या कह सकते हैं? वे ऐसा कहने की कोशिश करने वाले मूर्ख होंगे।

अनुभव के लिए अनुष्ठान हैं?

जो लोग यह तर्क देते हैं कि कर्म का अस्तित्व नहीं है, मनुष्यों में ये भेद क्यों हैं? पूछने पर कहते हैं, कर्म नहीं होते, कर्म का कोई सिद्धांत नहीं होता।

ये कठिनाइयाँ, बीमारियाँ, पीड़ाएँ और समस्याएँ जीवन में केवल अनुभव के लिए हैं।

लेकिन उनके लिए अनुभव क्या है? अनुभव क्यों? अनुभव आने पर क्या होता है? अनुभव की क्या जरूरत है? वह पता नहीं है, समझ में नहीं आता है।

क्योंकि किए गए कर्मों से सबक लेने के लिए अनुभव जरूरी है। एक आदमी तब तक नहीं बदलता जब तक वह खुद को अनुभव नहीं करता। मनुष्य में कोई परिवर्तन नहीं है। अच्छे रास्ते में मत आना। वह सत्कर्म नहीं करता, वह संसार को सताता है। वह नारद को सभी को दिखाते हैं। वह नहीं जानता कि धर्म क्या है, वह सत्य को नहीं जानता, वह सृष्टि के रहस्य को जानने का प्रयास नहीं करता। स्व निर्देशित जीवन लक्ष्य वह हासिल करने की कोशिश नहीं करता है। उनके द्वारा किए गए अनुभवों से हर कोई सीखता है।

वह बदलेगा तभी तो जीवन का लक्ष्य प्राप्त करेगा! सच्चाई जानता है। वह सृष्टि के रहस्य को जानता है। आइए एक छोटा सा उदाहरण देखें: वह इस जन्म में बहुत धनी पैदा हुआ था।

आइए कल्पना करें। उसे किसी गरीब की पीड़ा का कोई अनुभव नहीं है। इसलिए वह उन लोगों का उपहास और अपमान करता है जिनके पास उससे कम धन है। वह मुझे देखता है। मुसीबत में होने पर भी वह उनकी मदद नहीं करता।

उसे गरीब, भूखे, भिखारी की पीड़ा का कोई अनुभव नहीं है, तो ऐसे व्यक्ति को भले ही यह पता चल जाए कि वह भूख से मर रहा है, वह प्रार्थना या भीख भी मांगता है, तो भी वह मना कर देगा। कई बार गाली भी देता है।

इस प्रकार, वह अपने से नीचे के लोगों और गरीबों की परवाह करता है। ऐसा व्यवहार करके वह सोचता है कि सभी गरीब लोग हैं, और वह ऐसा व्यवहार करता है जैसे कि वे उससे हीन हों। वह बेचारा और मैं एक ही हैं! वह यह नहीं समझता कि इस सृष्टि में सब कुछ समान है या प्रकृति के विपरीत कार्य करता है। इस प्रकार वह सृष्टि के विपरीत अनेक कर्म करता है, पाप करता है,

सबको दुःख देता है और संसार में अशांति उत्पन्न करता है।

यदि ऐसा व्यक्ति इस तरह के पाप कर्म करता है, धर्म के विपरीत व्यवहार करता है, सृष्टि के विपरीत व्यवहार करता है, भले ही वह एक ही बात क्यों न हो, गरीबों की कठिनाई, पीड़ा, भूख के कारण, यह जानने के लिए कि वे किस मानसिक कष्ट से गुजर रहे हैं, वह अगले जन्म में एक गरीब व्यक्ति के रूप में जन्म लेकर स्वयं इस तरह के अनुभव का अनुभव करेगा। जब तक वह इस तरह पैदा नहीं होता और गरीबों की दुर्दशा को नहीं जानता, तब तक वह गरीबों के प्रति अच्छा व्यवहार नहीं करेगा और अच्छी तरह से नहीं जीएगा।

अगर उसे भी ऐसे दरिद्र का अनुभव हो जाए तो वह अगले जन्म में किसी गरीब की मदद करेगा। वह भूखे को चावल देता है और भलाई करता है। ऐसा व्यवहार करना, वैसा बदलना, उसे भी एक गरीब का अनुभव होना चाहिए! इसलिए उन्हें अपने पिछले जन्मों में किए गए कर्मों से सबक लेने और एक गरीब व्यक्ति का अनुभव प्राप्त करने के लिए एक गरीब व्यक्ति के रूप में जन्म लेना पड़ता है न कि एक भिखारी के रूप में। लेता है समतल! उसी तरह, आज हम जितने गरीब लोगों को देखते हैं, भिखारियों के बीच, उनमें से कई अपने पिछले जन्मों में अमीर, करोड़पति और राजा हैं। लेकिन अनुभव के लिए ऐसे ही जन्म लेना पड़ता है। श्रीकृष्ण जैसे योगी ही ऐसी बातें जान सकते हैं।

अर्थात इस जीवन में कैसा कर्म किया जाता है! इससे सबक लेने के लिए व्यक्ति दूसरे जन्म में इसका अनुभव करने के लिए जन्म लेता है। जान लें कि इसका अर्थ है 'कर्म द्वारा जन्म'। एक प्रकार का कर्म करने वाले को दूसरे प्रकार का अनुभव हो तो लाभ होता है। 'किस प्रकार के कर्म करता है, ऐसे अनुभव की आवश्यकता है' तभी एक में परिवर्तन होगा।

गरीबों का अपमान करने वाले को गरीबों के अनुभव की जरूरत होती है। और बिना पैर के अनुभव का क्या मतलब है? जिस व्यक्ति का दूसरा पैर कट गया हो उसे पैर न होने के अनुभव की आवश्यकता होती है। साथ ही, जो सुंदर हैं, उनका उपहास और अपमान करने के लिए, वे तब तक अपने दर्द का अनुभव नहीं करेंगे जब तक कि वे सुंदर पैदा न हों।

इस प्रकार, प्रत्येक जन्म में किए गए कर्मों के आधार पर, वह अगले जन्म में सबक सीखता है और अनुभव करता है और उसके लिए पुनर्जन्म लेता है। इस प्रकार प्रत्येक जन्म में किए कर्मों के आधार पर वह उन अनुभवों का फल भोगता है। वह अनुभव से सीखता है। बदल जाएगा वह दोबारा ऐसी गलतियां और पाप नहीं करेगा। वह धीरे-धीरे दुनिया की मदद करेंगे।

मानव जन्म की शुरुआत के बाद, जन्म के लक्ष्य को प्राप्त करने में कम से कम 400 या 500 जन्म लगते हैं। इस प्रकार वह अपने किए हुए कर्मों से सीखता है, और अपने पहले जन्म से एक राक्षस की तरह व्यवहार करते हुए, वह एक इंसान बन जाता है और मानवता दिखाता है। और वह अनुभव प्राप्त करता है और धीरे-धीरे महात्मा बन जाता है। अंत में वह परमात्मा बन जाता है।

इसलिए श्रीकृष्ण परमात्मा ने अधिक कर्म करने को कहा। लालची मत बनो। कारण यह है कि जो जितने अधिक कर्म करता है, उससे उतना ही अधिक अनुभव प्राप्त करता है। इसलिए कहा जाता है कि जीवन सबक सीखने के बारें में है। सीखने के लिए भी कहते हैं।

और अगर देखा जाए तो इस जन्म में अगर हम किसी का हाथ छूते हैं तो हमें कर्मफल भोगना पड़ेगा, उस तरह का अनुभव पाने के लिए अगले जन्म में हम अपंग हो जाएंगे, या हम इस जीवन में अपना हाथ खोकर वह दुःख को अनुभव करना पड़ता है। ऐसे व्यक्ति अपने दूसरे जन्म में वैसा काम नहीं करेगा।

साथ ही, यदि नीच जाति के रूप में उसका अपमान किया जाता है, तो उसे भी नीच जाति में जन्म लेना पड़ता है, यह जानने के लिए कि वह कैसी पीड़ा है। यदि आप किसी ऐसे व्यक्ति का मजाक उड़ाते हैं जो मानसिक रूप से विक्षिप्त है, तो आपको मानसिक रूप से विक्षिप्त के रूप में जन्म लेना होगा।

यदि आपको बलवान होने का अहंकार हो जाता है, तो आपको अगले जन्म में उस अनुभव के लिए निर्बल के रूप में जन्म लेना पड़ेगा। वह अनुभव के लिए ऐसे ही पैदा हुआ था! लेकिन वह इसे किए गए कर्म के अनुसार लेता

है। इसका मतलब है कि कर्म एक प्रमुख भूमिका निभाता है। जन्म कर्म पर निर्भर करता है। इसलिए हम जान सकते हैं कि 'कर्म सिद्धांत है'।

इसलिए उस कर्म के फल को भोगने के लिए पाप कर्म करके अनुभव प्राप्त करने का प्रयास न करें। बहुत दुख की बात है, जीवन नरक बन जाता है।'कर्म सिद्धांत है' इसे जानकर, दूसरों के जीवन को देखकर, उससे पाठ सीखना चाहिए।

योगियों की किताबें पढ़ों। महान लोगों के जीवन देखों। उनके रास्ते चलो। उनसे सीखो। इसके अलावा, चिंता न करें कि आप सीखने का अनुभव कर रहे हैं। ध्यान करिये।

इसलिए 'कर्मों से ही अनुभव है। लेकिन अनुभवों के लिए कर्म नहीं है।'

सोचिए कि क्या उसने सिर्फ अनुभव के लिए दूसरों को प्रताड़ित किया! ऐसे ही सबको सताता रहेगा तो क्या अनुभव मिलेगा? अनुभव नहीं मिलता फिर भी हिंसा करता रहता है। वह क्या अनुभव करेगा? 'अनुभव हिंसा का अनुभव करने से ही आता है'?. इसलिए, किए गए कर्मों का अनुभव होना चाहिए और सबक सीखना चाहिए।

क्योंकि कर्म का अस्तित्व है, हिंदू शास्त्रों में कहा गया है कि यमलोक है, यम है, चित्रगुप्त है, पाप कर्म करने वालों का सूची उसके पास है, और जो पाप कर्म करके मरेंगे वे यमलोक पहुंचेंगे और उन्हें जाना होगा वहां अपने पाप कर्मों के अनुसार दण्ड भोगने के लिए।

यहाँ हमें यह समझने की आवश्यकता है कि क्या यम है? क्या कोई दुनिया है? या नहीं? उन शास्त्रों का संदेश है कि पाप और अत्याचार करने वालों को अवश्य ही दण्ड मिलना चाहिए। यदि हम इसके बारें में सोचते हैं, तो हम समझते हैं कि जीवन में हम जिन कठिनाइयों और समस्याओं का अनुभव करते हैं, वे और कुछ नहीं बल्कि हमारे द्वारा पूर्व में किए गए हिंसक कर्मों और पापों का परिणाम हैं। नहीं तो मुश्किलें क्यों होंगी? हर किसी की मुश्किलें एक जैसी नहीं होती! हर एक की अलग कठिनाई है, हर एक की अलग समस्या है।

'अच्छा करेंगे तो अच्छा, बुरा करेंगे तो बुरा' को पा रहे है। 'हिंसा करेंगे तो हिंसा, आनंद देते है तो आनंद' को पा रहे है। हम नहीं चाहते कि कुछ हो। इस जीवन में किसी के द्वारा की गई कुछ गलतियों से बचा जा सकता है। लेकिन जो ऐसा करते हैं बार-बार गलती करने पर कानून यानि पुलिस द्वारा सजा दी जाती है चोरी करने वाले, अपराध करने वाले, हत्या करने वाले, हम देखते हैं कि धोखेबाज़ों को सजा मिल रही है, यानी कर्म के सिद्धांत के अनुसार वे कर्म कर रहे हैं और फल का आनंद ले रहे हैं!

आखिरकार, यदि आप किसी को डांटते हैं, तो आपको तुरंत उसकी प्रतिक्रिया मिलेगी और वह आपको फिर से डांटेगे तो तुरंत इस पर प्रतिक्रिया मिलेगी। यदि वह उसे हरा नहीं सका तो वह अपने लोगों को लाकर पीटेगा। इसका मतलब है कि हम कुछ कर्मों के लिए तत्काल परिणाम का अनुभव कर रहे हैं। गुटबाजी पैदा होती है। यदि कोई मारा जाता है तो वह समूह दूसरे समूह को मार रहे है। जब तक वे कर सकते हैं तब तक वे मारते रहते हैं। अगर पुलिस नक्सलियों को मार रही है! पुलिस को मरता नहीं देख रहे नक्सली! इसका मतलब है कि आपने जो कर्म किया है, उसके लिए आपको हर क्रिया मिल रही है! इसका अर्थ है 'कर्म का सिद्धांत'।

यह भी देखिए, जब कोई बहुत गलतियाँ और पाप करता है, कोई कठिनाई होती है, तो हम अपने आप से कहते हैं, 'पाप कहाँ जाता है? इसने पाप किया है और भुगत रहा है।' इन सबके अनुसार यह निश्चित है कि इस सृष्टि में कर्म हैं यह निश्चित है कि कर्म का सिद्धांत है।

किसी भी प्रकार का कर्म करने पर ऐसा अनुभव होता है। इसलिए यीशु ने कहा। 'जो आप बोते हैं वही आप काटते हैं' का अर्थ है कि आप जो भी कर्म करते हैं, आप ऐसा परिणाम अनुभव करेंगे। अनुभव क्यों करें? इसे फिर से न करने के लिए, अच्छी तरह से जीने के लिए, इसलिए, यह जानना चाहिए कि 'अनुभवों के लिए जन्म नहीं, कर्मों के अनुसार जन्म' हैं।

इसलिए निश्चित रूप से 'कर्म हैं'। कर्मसिद्धांत है। सभी महान योगियों ने यही कहा है। कुछ मूर्ख विभिन्न पुस्तकों को पढ़ते हैं और लोगों को यह

बताकर भ्रमित करते हैं कि वे क्या सोचते हैं। इसलिए वे अपनी शंकाओं को दूर रखते हैं और ध्यान का अभ्यास करते हैं।

पथ चलो। योगियों की पुस्तकें पढ़ों। कुछ ज्ञान प्राप्त करों। मूर्खों को अकेला छोड़ दो। उनके शब्दों पर ध्यान मत दो।

भगवान कृष्ण, बुद्ध, ईसा, पत्री जी जैसे योगियों के मार्ग पर चलें और जीवन-हिंसा और मांसाहार जैसे पाप कर्मों का त्याग करके अपने जीवन को धन्य करें। अज्ञानी और मूर्ख लोगों की बातों पर विश्वास न करें। जीवन को बेवजह नर्क मत बनाओ। पत्री जी के पथ पर चलकर इस स्वर्ग के सुखों का भोग करो।

कर्म को भोगना पड़ता है!
कोई नहीं बचा। यदि आप भगवान का नाम लेते हैं
और आग को छूते हैं, तो क्या नहीं जलेगा?

भगवद् गीता सोचने के लिए नहीं - अनुभव करने के लिए है!

सुखदुखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।

ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ।। (भ.गी. 2-38)

मैं सुख-दुःख में, लाभ-हानि में और विजय में समान मन से युद्ध की तैयारी करूँगा। ऐसे करेंगे तो पाप नहीं लगेगा।

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को जो कुछ भी सिखाया, वह पूरी दुनिया को सिखाने जैसा था। जैसा कि सभी को सिखाया गया है। हम सब को यही सिखाया जाता है। उनका संदेश क्या है! अपने जीवन में सुख-दुःख में नहीं, लाभ-हानि में नहीं, सुख-जीत में नहीं, समबुद्धि अर्थात सब कुछ समान समझकर जीवन का यह संघर्ष करना चाहिए। जो इस तरह जीते हैं वे दोषी महसूस नहीं करते। ऐसे व्यक्ति को 'योगी' कहा जाता है। यही बात आगे के श्लोक के माध्यम से भगवान कह रहे हैं।

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।

सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते ।। (भ. गी. 2-48)

हे अर्जुन! यदि आप योग के प्रति समर्पित हैं, तो आपने संग को त्यागकर, यदि कार्य फल देता है या नहीं, समत्व भाव से कर्म करो।

भगवान द्वारा बताए अनुसार कर्म करने के लिए 'योगनिष्ठा' आवश्यक है। ऐसा समभाव 'योग' बन जाता है। 'योग निष्ठा' का अर्थ है मन। उत्थान तभी होता है जब कोई 'आत्मा अवस्था' में होता है। यह 'ध्यान' से ही संभव होगा अर्थात प्रभु के सन्देश के अनुसार जो कोई भी 'ध्यान' कर रहा है,

सांसारिक वस्तुओं का संग त्याग कर अर्थात दिलचस्पी को त्याग कर, कार्य चाहे फलदायी हो या न हो! इसे सन्तुलन कहते हैं। इसे 'योग' कहते हैं। ऐसे व्यक्ति को 'योगी' कहा जाता है। परमेश्वर ने कहा कि उस पर कोई पाप नहीं पड़ेगा।

लेकिन यहां हमें एक बात समझनी होगी। मनुष्य दो प्रकार के होते हैं। जो 'महसूस करते हैं। अनुभव करते हैं' समभाव की स्थिति में हैं। जो सोचते हैं वे योगी नहीं हैं। जो अनुभव करते हैं वे योगी हैं। कारण यह है कि बहुत से लोग कहते हैं। मुझे कुछ भी होने की परवाह नहीं है! वे कहते हैं कि मैं इसे वैसे ही छोड़ देता हूं। इसका मतलब है कि वे अंदर की हर चीज पर प्रतिक्रिया करते हैं। लेकिन वे इसे बाह्य रूप से व्यक्त नहीं करते हैं। वे परवाह नहीं करते हैं। वे योगी नहीं हैं। वे पाप करते रहते हैं। लेकिन यह अस्थायी है। केवल शांति प्राप्त की जा सकती है।

लेकिन जिन लोगों ने योग की स्थिति प्राप्त कर ली है, उनका मतलब है कि उन्होंने 'आत्मा अवस्था' प्राप्त कर ली है। इसका अर्थ है कि जो लोग 'मानसिक अवस्था' से ऊपर उठ जाते हैं अर्थात जो 'ध्यान' का अभ्यास करते हैं वे समभाव का अनुभव करते हैं। उन्हें ऐसा नहीं लगता। वे अनुभव कर रहे हैं। उनका कोई पाप नहीं है। इसलिए जो सोचता है वह 'योगी' नहीं है। अनुभव करने वाला 'योगी' है। उन्हें सांसारिक चीजों में कोई दिलचस्पी नहीं है। अध्यात्म में रुचि है। जब तक आध्यात्मिक भाव हैं। यह अनुभवी होने की अवस्था है। इसलिए 'सोच' अलग है। जान लें कि 'महसूस' भाव अलग है।

आध्यात्मिक अवस्था 'ध्यान' से ही आती है। इसलिए पूजा, स्तोत्र और मंत्र करने वाले सोच रहे हैं। वे मन की स्थिति में हैं। लेकिन 'ध्यान' के माध्यम से जो 'आत्मा' यानी 'भागवत' की स्थिति में हैं, वे मन की स्थिति से परे अनुभव करते हैं। ये 'योगी' हैं। इसलिए, भगवान द्वारा वर्णित समता की स्थिति का अनुभव करने के लिए, व्यक्ति को 'ध्यान' करना होगा। इसलिए सभी को 'ध्यान' करना चाहिए। सभी चीजों में, सभी परिस्थितियों में 'समान स्थिति' प्राप्त करें। ख़ुशी से रहें।

भगवद् गीता में युग के अंत के बारें में!

इस समय दुनिया भर में चर्चा चल रही है कि 2012 के साथ यह युग समाप्त होने जा रहा है। तरह-तरह के कयास भी सुनने को मिल रहे हैं। कुछ का कहना है कि पृथ्वी में कई प्राकृतिक आपदाएँ आती हैं, जैसे सुनामी, तूफान, भूकंप, ज्वालामुखी विस्फोट, जंगल की आग, बाढ़ और असमय बारिश, जिससे भारी संपत्ति की क्षति और जीवन की हानि होती है; ऐसा कहा जाता है कि मानव जाति विलुप्त हो सकती है।

दूसरों का कहना है कि गड़बड़ी के कारण, पृथ्वी के आर्कटिक और अंटार्कटिक क्षेत्रों में बर्फ के पिघलने से समुद्रों में वृद्धि होगी और पृथ्वी का भूगोल बदल जाएगा, जिसका अर्थ है कि कुछ देश डूब सकते हैं। कहा जाता है कि कुछ नई चीजें सामने आ सकती हैं।

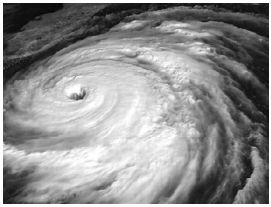

कुछ अन्य कहते हैं कि सूर्य के क्षेत्र में एक सुनामी उत्पन्न होगी, और यदि यह पृथ्वी से टकराती है, तो पृथ्वी नष्ट हो जाएगी। कुछ अन्य कहते हैं कि ग्रहों की कक्षाएँ बदल गई हैं, जिससे सृष्टि में कई परिवर्तन हुए हैं, और कुछ का कहना है कि पृथ्वी पर प्रदूषण बढ़ गया है। नतीजा ओजोन परत जो पृथ्वी की रक्षा करती है, समाप्त हो जाती है, जिससे यह हानिकारक हो जाती है।

यह भी कहा जाता है कि जब किरणें पृथ्वी से टकराएंगी तो ऐसी बीमारियां और मौतें होंगी जिनकी मानवता को कभी उम्मीद नहीं होगी और वे लक्षण सभी में पहले से ही दिखाई दे रहे हैं और बहुत से लोग अत्यधिक असाध्य रोगों से पीड़ित हैं।

और कुछ लोग ब्रम्हं गारी काल ज्ञान वास्तव होने का समय आगया है इसलिए सब लोग कह रहे है कि आजकल कुत्ते के पेट में बिल्ली का जन्म हुआ , गोपुर और दोहरे खम्बों का नाश हो रहा है, सारे-ओर अपशकुन दिख रहे है।

और इनमें से कुछ बातें 'नोस्टर डामस' नामक त्रिकाल ज्ञानी ने कहा है और वे अब हकीकत बन रहे हैं। वहीं कुछ लोगों का कहना है कि इन सभी चीजों का जिक्र हजारों साल पहले 'मियामी कैलेंडर' में किया गया था और इसकी अवधि 2012 में खत्म हो गई।

तो ये सारी बातें हाल ही में टी.वी. पर थीं। चैनलों पर भी इसका प्रसारण किया जा रहा है। कोई कहता है कि कुछ होगा, कोई कहता है कि डरने की कोई बात नहीं है, कोई कहता है कि ३ दिन तक अंधेरा छा जाएगा, कोई कहता है कि इलेक्ट्रॉनिक उपकरण काम नहीं करेंगे।

वास्तव में क्या होता है? क्या होने जा रहा है? क्या भगवद् गीता युग के वास्तविक अंत के बारें में कुछ कहती है? या यह सब सिर्फ अटकलें हैं? क्या मूल भगवद् गीता में युगान्त का उल्लेख है? निम्नलिखित श्लोक देखते हैं:-

परस्तस्मात्तु भावोन्योव्यक्तोव्यक्तात्सनातनः।

यस्स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति।। (भ. गी. 8-20)

तात्पर्यः- जो कुछ भी वस्तु (ईश्वर) अव्यक्त, सर्वोच्च, इंद्रियों के लिए अगोचर,

शाश्वत है, वही परम जीव है, नाशवान या अविनाशी है।

ऐसा कहा जाता है कि यहाँ अरबों जीवन समाप्त हो गए हैं, यह कहने जैसा है कि युग का अंत आ जाएगा!

उन्होंने आगे कहाः-

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।

रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्त संज्ञ के।। ‘ (भ. गी. 8-18)

तात्पर्यः- जब भगवान ब्र्म्मा का दिन शुरू होता है, तो सभी भौतिक चीजें अव्यक्त (ईश्वर) से पैदा होती हैं। फिर रात होने पर वे उस अदृश्यता में डूब जाते हैं।

यहां भी भगवान की सुबह शुरू हो गई है, जिसका अर्थ है कि मूर्त और अमूर्त दोनों तरह की सभी चीजें बनाई जा रही हैं। साथ ही, परमेश्वर के लिए रात शुरू हो गई है, जिसका अर्थ है कि जो कुछ भी बनाया गया है वह समाप्त हो रहा है। इसलिए यह कहा गया है, ‘यदि भगवान अपनी आँखें बंद कर लेते हैं, तो यह युग का अंत है, और यदि वे अपनी आँखें खोलते हैं, तो युग की शुरुआत’ निम्नलिखित श्लोक में कहा गया है।

भूतग्रामस्स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।

रात्र्यागमेवश :पार्थ प्रभवत्यहरागमे।। (भ.गी. 8-19)

तात्पर्यः- हे अर्जुन! वे जीव कर्म के आधार पर पैदा होते हैं और भगवान ब्र्म्मा की रात की शुरुआत में विजयी होते हैं और भगवान ब्र्म्मा के पास लौट आते हैं। इनका जन्म दिन की शुरुआत में होता है।

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिम यान्ति मामिकां ।

कल्पक्षये पुनस्तानी कल्पादौ विसृजाम्यहं ।। (भ.गी. 9-7)

तात्पर्यः अर्जुन! जलप्रलय के दौरान सभी अरबों प्राणी मेरी प्रकृति को खो देंगे। श्री कृष्ण परमात्मा ने बताया है कि युग का आदि और युग का अंत इसी सृष्टि में होगा। युग के प्रारंभ में भौतिक और अभौतिक संसार उत्पन्न होगा। युग के अंत में, यह घोषणा की गई कि यह सारी दुनिया गायब हो जाएगी। अर्थात भगवद् गीता में युग के अंत का उल्लेख है।

लेकिन ऐसा कब होगा? यह किस वर्ष होता है? हमारे पास वह स्पष्टीकरण नहीं है। लेकिन युगान्त का उल्लेख है। और 2012 में जो हुआ वह एक युग का अंत है? यही है ना ब्र्ह्मर्षि पत्री जी स्पष्ट रूप से कह रहे हैं कि 2012 में जो होने जा रहा है वह युग का अंत नही। युग का परिवर्तन है। युगांत और युग परिवर्तन अलग अलग है। बहुत से लोग युग के परिवर्तन को युगांत समझकर डरते है। पुराणों से हमें पता चल रहा है कि युग परिवर्तन होगा ! तो सृष्टि में 4 युग हैं। वे 1) कृत युग (सत्य युग) 2) त्रेता युग 3) द्वापर युग 4) कलियुग कहे जाते हैं।

पुराणों के अनुसार श्री रामचंद्र त्रेता युगान्तम में थे। कहा जाता है कि भगवान कृष्ण ने द्वापर युगान्तम में और भगवान कल्कि ने कलियुगान्तम में अवतार लिया था। इसका साफ मतलब है कि युग बदलते हैं।

साथ ही अब जो होने जा रहा है वह यह है कि 'कलियुग अंत नहीं है, सृष्टि का अंत नहीं है। युग परिवर्तन ही है सृष्टि का अंत नहीं है'। यह बात सभी को याद रखनी चाहिए। वही ब्र्ह्मर्षि पत्री जी यह भी कहते हैं कि 2012 के बाद युग आएगा परिवर्तन होगा और सतयुग प्रारंभ होगा। किसी भी युग में, युग के धर्म के अनुसार लोगों का व्यवहार होगा, युग बदलेगा। ब्र्ह्मर्षि पत्री जी का कहना है कि उनकी जीवन शैली और व्यवहार भी बदल जाएगा, और इसलिए वर्तमान कलियुग बदल जाएगा और सत्य युग 2012 में शुरू होगा, इसलिए पत्री जी कह रहे है कि 'ध्यान' जो सत्य युग के धर्म है, वह सभी को करना चाहिए। कलियुग की तुलना में सतयुग में पृथ्वी पर अधिक शक्तियाँ हैं, यदि मनुष्यों में उन शक्तियों का सामना करने की शक्ति है।

ऐसा कहा जाता है कि मनुष्य को 'ध्यान' अवश्य करना चाहिए, और यदि वह 'ध्यान' नहीं करता है, तो मनुष्य को विभिन्न रोगों और विभिन्न व्याधियों से पीड़ित होना पड़ेगा और यहाँ तक कि अपनी जान भी गंवानी पड़ेगी।

कहा जाता है कि युग बदलने से अच्छा होगा, बुरा ही खत्म होगा और वह नहीं बदलेगा। हिंसा और नरभक्षण, जो वर्तमान में कलियुग में व्याप्त है,

समाप्त हो जाएगा, साथ ही मनुष्य के बीच भेदभाव, जाति, धर्म और क्षेत्रीय मतभेद समाप्त हो जाएंगे। ब्र्ह्मर्षि पत्री जी कह रहे है कि 'सब बराबर' का युग शुरू होता है। अन्याय, डकैती, अत्याचार, राक्षस, अराजकता, अत्याचार समाप्त हो जाएंगे, न्याय, धर्म, शांति, करुणा, प्रेम, दया और दान सभी के गुण होंगे, इस प्रकार 'कलियुग' समाप्त हो जाएगा और 'सत्ययुग' का शुरू हो जाएगा।

ब्र्ह्मर्षि पत्री जी कह रहे है कि मनुष्य के लिए वर्तमान अशांति और दुःख मौजूद नहीं होगा, केवल शांति, खुशी और आनंद मौजूद रहेगा। सब कुछ ठीक चल रहा है। वे कहते हैं कि यह अच्छा रहेगा। इसलिए डरने की कोई बात नहीं है। ऐसा कहा जाता है कि आने वाला सब एक अच्छा समय और एक अच्छा युग है।

लेकिन दो काम करने हैं 1) हिंसा बंद करो 1) ध्यान करो यानी जानवरों पर अत्याचार मत करो और मांस खाना बंद करो। यह भी कहा जाता है कि 'सांस पर ध्यान' से ही ध्यान करना चाहिए। यह सभी को करना चाहिए और याद रखना चाहिए। इसलिए 'ध्यान' कीजिए और प्रसन्न रहिए। 'युग के अंत से मत डरो। युग के परिवर्तन के साथ व्यवहार करो'।

प्रकृति द्वारा निर्धारित सीमाओं का उल्लंघन करना वास्तव में परमात्मा कि आज्ञा का धिक्कार करना ही है।

भगवद् गीता में जीव-हिंसा के बारें में!

भगवद् गीता में भगवान कृष्ण ने कई अवसरों पर जीवहिंसा का उल्लेख किया है। हिंसा क्यों नहीं करते? जीवों पर अत्याचार करके हानियों और उनके परिणामों को अच्छी तरह से समझाया गया है। यदि मनुष्य को दुख से मुक्त होना है, अर्थात समस्याओं से मुक्ति, रोगों से मुक्ति, कष्टों से मुक्ति, अशांति से मुक्ति, परिवार की समस्याओं से मुक्ति, आर्थिक समस्याओं से मुक्ति, आर्थिक बोझ से मुक्ति, पूजा, प्रार्थना, व्रत, भजन, मंत्रोच्चार करना ही काफी नहीं है। आदि जीवों के प्रति क्रूरता से मुक्त होना चाहिए। हमें उनके प्रति दया दिखानी चाहिए, हमें हर चीज को समानता से देखना चाहिए, हमें उनमें ईश्वर को देखना चाहिए। उनके सुख-दुःख को अपना सुख-दुःख समझकर पशुओं को दुःख नहीं देना चाहिए, हिंसा का कारण बनने वाले मांस के सेवन से बचना चाहिए। इनका अभ्यास करने से कठिनाइयों से छुटकारा मिल सकता है। इसके अलावा भगवद् गीता के सार से यह समझा जा सकता है कि अपराधी कितनी भी पूजा कर लें, वह व्यर्थ है।

इसलिए, 'गीता का पाठ नहीं करना है, लेकिन जो भगवान कहते हैं। उसका पालन करना चाहिए'। यह कुछ ऐसा है जिसे हर किसी को महसूस करना चाहिए। कारण जीवों में है। भगवान भी! यानी हम उसी की पूजा करते हैं!

इसलिए, जो लोग हिंसा करते हैं, जो मांस खाते हैं और हिंसा का कारण बनते हैं, वे षोडसोपचार पूजा करने पर भी भगवान को प्रसन्न नहीं कर सकते; क्योंकि सभी जीव उनके ही रूप हैं! वह सब कुछ है! इसलिए जान लेना

चाहिए कि 'सब कुछ एक जैसा है'।

इसे समझो और जानवरों और मूक प्राणियों को मत मारो। मांस खाना उनकी हिंसा और मौत का कारण नहीं होना चाहिए। तुम्हें पता होना चाहिए कि यह भी ईश्वर की यातना है। सब कुछ एक है! समझें कि सब कुछ बराबर है। तभी हम ईश्वर की कृपा प्राप्त कर सकते हैं। हम उनकी कृपा के पात्र हो सकते हैं। हम दुःख से बच सकते हैं। मुक्त किया जा सकता है। सुख से रह सकते हैं।

क्योंकि भगवद् गीता का उपदेश देने वाले बुजुर्ग, गुरु और विद्वान हिंसा के बारें में ज्यादा उल्लेख नहीं करते हैं, आम लोग सोचते हैं कि मांस खाना गलत नहीं है। मैं इसका पछतावा नहीं करना चाहता। न केवल वे मांस खाते हैं, बल्कि बच्चों को बचपन से ही इस गलत धारणा के साथ, इसे खाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि यह एक परंपरा है जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी चली आ रही है और मांस खाने से मजबूत होते है। वे जबरदस्ती कर रहे हैं। वे आपको खाने के लिए मजबूर कर रहे हैं। अधिक नहीं सोच रहे हैं।

वे यह सोचने में असमर्थ हैं कि मांस एक मृत पशु, मृत भोजन और रक्त है। वह मांस और रक्त मानव भोजन नहीं है। वे नहीं जानते कि जीव हत्या पाप है। मनुष्य यह नहीं सोचते कि वे निर्दोष, असहाय और गूंगे प्राणी हैं, और यह कि वे मांसाहारी हैं ऐसी स्थिति में जहाँ वे कम से कम अपने दर्द और पीड़ा को व्यक्त नहीं कर सकते। इसके अलावा, वे यह महसूस करने में असमर्थ हैं कि वे मनुष्य हैं, मानवता उनकी स्वाभाविक विशेषता है, और क्रूरता और राक्षसीता उनकी विशेषताएं नहीं हैं। सृष्टि के सभी प्राणी मनुष्य के साथ हैं।

वे यह महसूस नहीं कर पा रहे हैं कि वे सब ईश्वर की रचना का हिस्सा हैं, सब उनके रूप हैं, सब उनकी शक्ति है, सब उनकी संतान हैं। इसलिए व्यक्ति को अच्छी तरह से सोचना चाहिए। **'ईश्वर की पूजा न करें बल्कि ईश्वर ने जो सिखाया है उसका अभ्यास करें'।**

ऐसा मत सोचो कि भगवद् गीता हिंसा के बारें में नहीं है। बिल्कुल हिंसा की बात नहीं की गई है। '**अहिंसा को सबसे बड़ा गुण कहा गया है।**' इसलिए '**जीवन के लिए हिंसा मत करो और मांस खाने से परहेज करो**'। **भगवद् गीता में देखें कि भूतदय के बारें में भगवान ने क्या कहा हैः-**

उन्होंने निम्नलिखित श्लोक के माध्यम से यह स्पष्ट कर दिया है कि वे ही सभी जीवों में विद्यमान हैं।

अहमात्मा गुड़ाकेश सर्वभूताशय स्थितः।

अहमादिश्च मद्यंच भूतानामन्त एवच।। (भ. गी. 10-20)

तात्पर्यः हे अर्जुन! मैं समस्त प्राणियों में निवास करने वाली आत्मा हूँ। और मैं जीवों का आदि विचार हूँ। उपरोक्त श्लोक के माध्यम से हम जान सकते हैं कि सभी जीवित प्राणी ईश्वर के रूप हैं। इसलिए जो कुछ भी सताता है, वह मानो ईश्वर को सताता है! उन्होंने यह भी कहाः-

हमें मत खाओ। प्यार करना।।

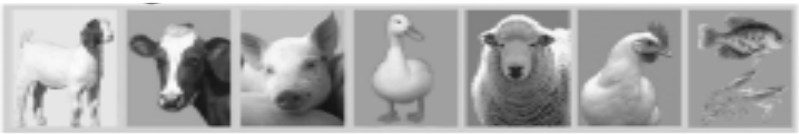

ईश्वर के लिए सभी जीव अनमोल हैं।

समं पस्यंति सर्वत्र समवस्थित मीस्वरं।

न हिनस्त्यात्म नात्मानं ततो याति परांगतिम्।। (भ.गी.13-29)

तात्पर्यः- परमात्मा को सभी प्राणियों में समान रूप से व्याप्त देखकर मनुष्य अपनी आत्मा को कष्ट नहीं देता। इसलिए वह सर्वोच्च भाग्य (मोक्ष) प्राप्त करता है।

उपरोक्त श्लोकों के माध्यम से यह ज्ञात होना चाहिए कि ईश्वर सभी प्राणियों में विद्यमान है। साथ ही मनुष्य को स्वयं यह जानना चाहिए कि वह भी आत्मा का ही एक रूप है। इसलिए बुजुर्ग और विद्वान दिव्य प्राणी हैं! हम इसे मनुष्यों को संबोधित देखते हैं। ऐसे इंसान के लिए किसी भी जीव यानि जानवर को सताना

भगवान ने हमें खुशी से जीने का अधिकार दिया हैं, सिर्फ आपको ही नहीं।

अपने आप को सता रहा है। जो इस बात को समझ लेता है वह किसी भी प्राणी अर्थात किसी भी जीवित प्राणी पर अत्याचार नहीं करता। एक मनुष्य जो इस सत्य को समझता है और कार्य करता है उसे मोक्ष प्राप्त करना चाहिए। भगवान ने समझाया कि दुःख से मुक्ति मिलेगी। यही बात आगे के श्लोक में कही गई है।

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योर्जुन ।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः।। (भ.गी. 6-32)

तात्पर्यः हे अर्जुन! जो सभी प्राणियों का सुख और दुख है। जो उसके सुख-दुःख देखता है, वह सबसे कम प्रिय है। इस श्लोक के माध्यम से हम जान सकते हैं कि जो व्यक्ति इस तरह का व्यवहार करता है वह भगवान को प्रिय हो सकता है, यह जानकर कि उसके लिए उसके शरीर का कष्ट उतना ही कठिन है जितना कि सभी जानवरों का कष्ट भी उसके लिए उतना ही कठिन है। अर्थात यदि आप भगवान को प्रसन्न करना चाहते हैं, तो षोडसोपचार पूजा करने से कोई लाभ नहीं होता है। तुम्हें पता होना चाहिए कि पशु क्रूरता और मांस भक्षण नहीं करना चाहिए।

आइए यहां कुछ सोचते हैं। मुर्गे की चर्बी काटते समय यदि किसी व्यक्ति की अंगुली कट जाए तो वह 'अब्बा' और 'मामा' बोलके खूब रोएगा। और मुर्गे को मारने में कितना दर्द होता है? यह भी हमारी तरह एक जीवित

चीज है! यह भगवान कृष्ण का संदेश है।

सर्व भूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते।

अविभक्तं विभक्तेषु तज्ञानं विद्धि सात्विकं।। **(भ. गी. 18-20)**

तात्पर्यः- आप किस ज्ञान से जान सकते हैं कि एक ही आत्मवस्तु (ईश्वरीय उपस्थिति) जो अविभाजी है सभी विभाजित और असमान जीवों में अविभाजित और एकजुट है! जानो कि ऐसा ज्ञान सात्विक ज्ञान है।

क्या आपकी खुशी के लिए हमारी आजादी छीनना उचित हैं

पृथक्त्वेन तु यज्ञानं नानाभावान पृथग्विधान ।

वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ञानं विद्दि राजसम।।' **(भ. गी. 18-21)**

तात्पर्यः- जिस ज्ञान से मनुष्य सभी प्राणियों को भिन्न-भिन्न प्रकार का और अनेक जीवों को भिन्न-भिन्न अंगुलियों के रूप में देखता है, आइए जानते हैं कि ऐसा ज्ञान राजविद्या है।

उपरोक्त दो श्लोकों से जो ज्ञात होना चाहिए वह यह है कि भले ही सभी जानवर सतह पर अलग-अलग दिखाई देते हैं, लेकिन सभी में आत्मा अर्थात् ईश्वर एक है। इस प्रकार के बोध ज्ञान को सात्विक ज्ञान कहा जाता है। यह सही ज्ञान है।

इसके अतिरिक्त जो ज्ञान प्रत्येक वस्तु को अलग-अलग देखता है, उसे राजसज्ञानम् कहते हैं। यह है गलत ज्ञान। उपरोक्त श्लोकों में भगवान हमें इस

गलत ज्ञान को छोड़ने और सही ज्ञान के साथ कार्य करने के लिए कहते हैं कि सब कुछ भगवान है।

भगवान कृष्ण ने निम्नलिखित श्लोकों के माध्यम से उन लोगों के भाग्य की व्याख्या की है जो इसे महसूस नहीं करते हैं।

तानहं द्विषतः क्रूरान संसारेषु नराधमान।

क्षिपाम्यजस्र माशुबा नासुरीष्वेव योनिषु ।। (भ. गी. 16 -19)

तात्पर्यः- इस प्रकार मुझको सताओगे जो सब प्राणियों का आत्मा रूप है।

मैं क्रूर और दुष्ट लोगों को जन्म और मृत्यु के दयनीय संसार में फेंक दूंगा और उन्हें मैं एक अत्यंत दुखी असुर योनियों में जन्म दूँगी।

असुरीम योनि मापन्ना मूढा जन्मनि जन्मनि ।

मा मप्राप्यैव कौन्तेय ततो यान्त्यधमाम गतिम।। (भ.गी. 16-20)

तात्पर्यः- हे अर्जुन! असुरयोनियों में पैदा हुए जो प्राणिहिंसक है, वे हर जन्म में मुझे प्राप्त करने का मार्ग न जानने के कारण भी तुम पतित हो जाते हो। लंबे समय तक उन्हें दयनीय नरक मिलता हैं।

इस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण ने उपरोक्त श्लोकों के माध्यम से परमात्मा गीता में 'जीवहिंसा मनभक्षण' से होने वाले नुकसान की स्पष्ट जानकारी दी है। इसके अलावा, जो लोग जीवन का दुरुपयोग करते हैं वे भगवान को प्राप्त नहीं कर सकते हैं, यह नहीं जान सकते कि वह कौन है, और न ही वे भगवान को

प्राप्त करने का मार्ग जान सकते हैं। प्रभु ने कहा कि कई जन्म दुख में जियेंगे। यदि आप मांस खाते हैं।

इसलिए जो लोग मांस खाते हैं वे भगवान के बारें में कही गई बातों को नहीं समझते। 'ध्यान' आत्मा तक पहुँचने का मार्ग है। मुझे समझ नहीं आ रहा है कि मैं क्या कहूं। वे कब तक वास्तविक और सच्चे ईश्वर (आत्मान) के बारें में नहीं जानते हैं और मूर्तियों और तस्वीरों को ईश्वर के रूप में समझ रहे हैं। वास्तविक ईश्वर कौन है! वह कहाँ है? उस तक कैसे पहुँचें! वे समस्याओं से पीड़ित हैं क्योंकि वे प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। इसलिए जीवन के लिए हिंसा और मांस खाना तुरंत बंद कर देना चाहिए। अन्यथा, आत्मा वह कभी नहीं जानती कि भगवान कहीं नहीं बल्कि अपने भीतर है और है उसके बहुत करीब।

इसके अलावा, भगवान के लिए कहीं जाने की जरूरत नहीं है। यदि आप स्वयं में जाते हैं, तो आप कभी नहीं समझ पाएंगे कि आप ईश्वर हैं। कहे तो भी समझ में नहीं आता। उन्होंने कहा कि इसका कारण ईश्वर है। यही है ना! इसलिए पशुवध और पशुबलि से बचना चाहिए। इसके अलावा, उन्होंने निम्नलिखित श्लोक में कहा है कि वे उन्हें पसंद करते हैं जो सभी भागों से प्यार करते हैं।

पशुवध एक पाप हैं - पाप एक बीमारी हैं

पूर्व जन्म का पाप रोग रूप हैं

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एवच

निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी। (भ.गी. 12 -13)

तात्पर्यः- वह जो सभी जीवों के प्रति द्वेष नहीं रखता, मित्रवत, करुणामय, अभिमान रहित, सुख दुःख में समभाव रखता है। मुझे वह पसंद है जो मजबूत और धैर्यवान है।

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्व च मयि पश्यति

तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणस्यति। (भ. गी. 6-30)

तात्पर्यः- जो समस्त प्राणियों को मुझमें देखता है, और मुझे समस्त प्राणियों में देखता है, ऐसी व्यक्ति को मैं न केवल दिखाई दूंगा और वे भी मुझे दिखाई देगा।

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः

छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहितेरताः (भ. गी. 5-25)

तात्पर्य :- जो निष्पापी है, संशयों को छोड़ देनेवाला, इन्द्रिय और मन को अपने स्वाधीन में रखते हैं, सभी प्राणियों कि भलाई के लिए दिलचस्पी रखते है वे ब्र्मसाक्षात्कार झ्मोक्ष ट प्राप्त करते हैं।

सभी प्राणियों को हित लानेवाले मनुष्य न केवल ब्रह्म स्थिति को प्राप्तः करता है, बल्कि शांति को भी प्राप्त करता है।

जिसे न कोई दुःख है, न कोई इच्छा ,भगवान कृष्ण हमें सूचित करते हैं कि वे एक महान भक्त बनेंगे। निम्नलिखित श्लोकों के माध्यम से हम ये जान सकते है।

भोक्तारं यग्न तपसां सर्वलोकमहेश्वरम ।

सुह्मदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा माम् शान्तिमृच्छति ।। (भ. गी. 5-29)

तात्पर्यः- यज्ञों का, तपस्याओं का (फल भोगने वाला), समस्त लोकों का स्वामी (प्रभु, शासक) समस्त जीवों का हित करने वाला मुझे पेहचानकर शांति प्राप्त कर रहे है।

अब सबके पास सब कुछ है पर चैन किसी को नहीं। इसका मुख्य कारण वही है जो भगवान ने उपरोक्त श्लोक के माध्यम से कहा है।

संदेश यह है कि जो जानते हैं कि वे चौरासी लाख प्राणियों के सुख की कामना करते हैं और उसके अनुसार कार्य करते हैं, वे शांति प्राप्त करते हैं। इसलिए जो लोग शांति से रहना चाहते हैं उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए कि भगवान केवल उन्हें ही पसंद करते हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि केवल इंसान ही इसे पसंद कर सकते हैं। वह जानवरों सहित सभी से प्यार करते है। यह समझना चाहिए कि वह सबका कल्याण चाहते है। जानवरों, बेजुबान जीवों पर दया दिखानी चाहिए। उन्हें प्यार करना चाहिए। समझें कि वे भी भगवान से प्यार करते हैं। जानवरों पर अत्याचार नहीं करना चाहिए।

भगवद् गीता में उपरोक्त श्लोकों के माध्यम से भगवान ने जीवहिंसा और मांस खाने के बारें में बहुत कुछ बताया है। यह सभी के लिए भगवान को समझने और पूजा करने के लिए नहीं है, प्रार्थना करने के लिए नहीं, जैसा कि उन्होंने कहा, 'सर्व भूत दया का अर्थ है अहिंसा'। हिंसा मत करो। मांस खाने से बचना चाहिए, शाकाहारी भोजन करना चाहिए। भगवान द्वारा बताए अनुसार ध्यान करना चाहिए। जीवन को आशीर्वाद देना चाहिए।

भगवद् गीता के अनुसार मानव भोजन शाकाहार या मांसाहार ?

मांस मानव भोजन नहीं है। इसे नहीं खाना चाहिए, यह पाप है क्योंकि कई पौधों में भी जीवन होता है! कारण यह है कि मानव शरीर शाकाहार निर्मित है मांसाहार निर्मित नहीं।

इसका मतलब शाकाहारियों के लिए उपयुक्त है लेकिन मांसाहारियों के लिए नहीं। यह सृजन में एक व्यवस्था है। इसका अर्थ है ईश्वर द्वारा की गई व्यवस्था।

यही कारण है कि बाघ और शेर जैसे मांसाहारी जंतुओं को दांत नहीं होते। उनके पास मजबूत नुकीले और पंजे होते है। ये बिना किसी हथियार के जानवरों को मारते है, उनकी खाल निकालते है और उनका कच्चा मांस खाते है। वे मांस चबाते नहीं, निगलते है। इस प्रकार मांस के टुकड़ों को बिना चबाये निगला जा सकता है। निगलि हुयी चीज पच सकती है। स्वयं भगवानने ही उन के लिए यह व्यवस्था की है।

आनंद लेना 'रक्त उनके लिए घृणित नहीं है, और मांस के टुकड़ों को निगलना मुश्किल नहीं है'। मांस को चबाने की जरूरत नहीं है। कुदरत ने उन्हें बिना चबाये भी चबा लेने की क्षमता दी है। उसी के अनुसार उनका शरीर बना है। इसलिए उनका पाचन तंत्र बहुत पतला होता है। भोजन को सुखाने वाली लार में हाइड्रोक्लोरिक एसिड की उच्च सांद्रता के कारण मांस के टुकड़े जल्दी सूख जाते हैं।

लेकिन मानव शरीर, जो सृष्टि के वनस्पति पदार्थ से बना है, में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं है। भगवान ने मानव शरीर को शाकाहार के लिए डिजाइन किया है। मांसाहारियों के लिए नहीं बनाया गया है। इसलिए मनुष्य किसी भी जानवर को किसी हथियार के इस्तेमाल से ही मार सकता है। साथ

ही वह किसी हथियार से ही चमड़ी को देह से अलग कर सकता है। साथ ही, केवल चाकू से मांस काट सकता है। इसमें देखा जा सकता है कि मीट शॉप में जानवर के शरीर के मांस को चाकू से टुकड़ों में काटकर उपभोक्ता को बेचा जाता है। उपभोक्ता भी मांस के टुकड़ों को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटता है और टुकड़ों को पीसता है ताकि वे नरम हो जाएं। इन पर मसाले, मिर्च और नमक छिड़के जाते हैं ताकि इनसे दुर्गंध न आए। वे इतना नहीं खा सकते, इसलिए उनके साथ शाकाहारी भोजन मिलाया जाता है। ऐसा किए बिना मनुष्य मांस नहीं खा सकता। मांसाहारी जानवर कच्चे मांस के टुकड़ों को निगल नहीं सकता। मनुष्य को इस प्रकार पके हुए मांस को अपने दाँतों से चबाना चाहिए। चबाया जाए तो मनुष्य उस भोजन को निगल नहीं सकता। यदि वह बिना चबाए निगल जाता है, तो वह अपने द्वारा खाए गए भोजन को पचा नहीं पाता है। यानी शाकाहारी इंसान को चबाना पड़ता है और ऐसे ही चबाने के लिए दांत भी दिए गए थे। किसी भी भोजन को उन्हीं दांतों से बारीक पीसकर निगलना चाहिए। इस सृष्टि में यही शाकाहारियों के साथ एक व्यवस्था है।

यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि मनुष्य के दांत होते हैं। मांसाहारियों के दांत नहीं होते। अतः मनुष्य मांसाहारी नहीं है। शाकाहार मनुष्यों के लिए उपयुक्त है, मांस के लिए नहीं। अतः शाकाहारी भोजन ग्रहण करें। यह मनुष्य के लिए प्रकृति का प्राकृतिक भोजन है जो भगवान ने नियुक्त किया है।

इस बिंदु का उल्लेख भगवद् गीता में भी किया गया है। आइए हम भगवद् गीता में दिए गए निम्नलिखित श्लोक को देखें।

अहम वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।
प्राणापान समायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधं ।। (भ. गी. 15-14)

मैं 'वैश्वानर' हूँ। जठराग्नि के रूप में प्राणियों के शरीर में रहकर, प्राण और अपान वायू से मिलकर चार तरह के भोजन को पाचन कर रहा हूँ।

यहां भगवान के चार रूप हैं जो मनुष्य ग्रहण करते हैं। वे कहते हैं कि मैं ही अन्न को पचाने वाला हूँ। वो चार आइए देखें कि खाद्य पदार्थ कितने प्रकार के होते हैं।

1) भक्ष्यं- जो कठिन पदार्थ है जिसे दांतों से काट कर खा सकते है जैसे फल, सब्जिया और स्नैक्स।

2) भोज्यं - मृदु पदार्थ जो जीभ से चाटकर निगले जाते हैं जैसे चावल आदि।

3) लेह्यं :- जिह्वा से चखे जाने वाले अचार आदि।

4) चोष्यं :- पायसम, चारु, छाछ मुंह में निगलने वाले के लिए।

उपरोक्त के आधार पर हमें यह समझना होगा कि चार प्रकार के भोजन में एक ऐसा भोजन भी है जिसे दांतों का उपयोग करके खाया जाता है। वह भोजन शाकाहारी है। और किसके दांत हैं? केवल शाकाहारी लोगों के पास है। शाकाहारी जीव केवल अपने दांतों का उपयोग करके शाकाहार को ग्रहण कर सकते हैं। इसलिए दांतवाले जो है वे सभी शाकाहारी ही है।

ईश्वर की सृष्टि में प्रत्येक जीव के लिए भोजन एक अनिवार्य आवश्यकता है। किसी भी जीव को जीवित रहने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। बिना खाना खाए जीव ने अपना जीवन काल नहीं जिया है।

इसलिए, ईश्वर की रचना के किसी भी प्राणी को खाना पाप नहीं है। लेकिन क्या मायने रखता है कि कौन क्या खाना खाता है। भगवान खुद तय करते हैं कि किसे क्या खाना चाहिए। इसलिए उन्होंने उसी के अनुसार उनके शरीर का निर्माण किया। मनुष्यों को शाकाहारी भोजन चबाने और खाने के लिए निर्धारित किया गया है। इसलिए दांत दिए जाते हैं। साथ ही, बाघ और शेर जैसे मांसाहारी जानवरों को दांत नहीं दिए जाते हैं। वे मांस और मांस के टुकड़ों को बिना चबाए निगल लेते हैं।

मांसाहारी बाघ और शेर शाकाहारी भोजन नहीं करते और न ही कर सकते हैं! इसके अलावा, वे अपना पूरा जीवन केवल कच्चा मांस खाकर जी सकते हैं। साथ ही कच्चा मांस खाने से इंसान दो या तीन हफ्ते से ज्यादा जिंदा

नहीं रह सकता है। लेकिन वह शाकाहारी भोजन लेकर अपना पूरा जीवन व्यतीत कर सकता है। इसका अर्थ है कि ईश्वर द्वारा मनुष्य के लिए निर्धारित भोजन केवल शाकाहारी भोजन है।

इसलिए जिन मनुष्यों के दांत हैं उनके लिए शाकाहारी भोजन करना पाप नहीं है। साथ ही बिना दांत वाले बाघ और शेर की तरह मांस खाना भी पाप नहीं है। यह उनके लिए भगवान द्वारा निर्धारित प्राकृतिक भोजन है। इस प्रकार सब्जियाँ खाने वाले शाकाहारी और मांस खाने वाले मांसाहारी सृष्टि की एक स्वाभाविक विशेषता है। इसके विपरीत कार्य करना सृष्टि के विरुद्ध है। पाप सृष्टि के विपरीत काम कर रहा है।

सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में जीवन है। जीवन के बिना सृष्टि में कुछ भी नहीं है। जिसके पास जीवन नहीं है वह सृष्टि में एक समय के लिए गायब हो जाता है। तो क्या पौधों में जीवन है? या नहीं ? यह प्रधान नहीं है। क्या सृष्टि कि और सृष्टि नियमों के अनुसार व्यवहार किया है या नहीं? यही प्रधान है। जो सृष्टि, प्रकृति, यानी ईश्वर के साथ तालमेल बनाकर रहते हैं, उन्हें कभी कष्ट नहीं होगा। यदि आप इसके विपरीत करेंगे तो आपको नुकसान होगा। अतः जिन मनुष्यों में विचार करने की शक्ति है, उन्हें इस विषय में भली-भाँति विचार करना चाहिए। इसे समझना चाहिए। शाकाहारी भोजन करो और सुख से रहो।

इसके अलावा, जीवन सिर्फ खाने के लिए नहीं है। क्योंकि हम जीते हैं, हमें खाना चाहिए क्योंकि हमें जीना चाहिए। इसलिए कहा जाता है 'हम खाने के लिए नहीं जीते, हम जीने के लिए खाते हैं' इसलिए मनुष्य को जीवित रहने के लिए शाकाहारी भोजन की आवश्यकता होती है। शाकाहारी भोजन करते हुए वास्तविक जीवन क्यों? जीवन का उद्देश्य क्या है? आपको यह जानना होगा, आपको इसे हासिल करना होगा। जिसने यह हासिल कर लिया वही सही इंसान है, वही सही जीवन है। मानव जीवन का उद्देश्य क्या है भगवद् गीता में स्पष्ट रूप से सिखाया गया है। इसका अध्ययन करें और भगवान कृष्ण द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण करें। यही बात पत्री जी सिखा रहें हैं। मनुष्य को शाकाहारी भोजन करना चाहिए, जो किया जाना चाहिए वह ध्यान है **। यह जीवन का आनंदमय तरीका हैं।**

'भगवद् गीता' को समझने के लिए

भगवान ने जो उपदेश दिया उसे 'भगवद् गीता' कहा जाता है। 'भगवद् गीता' एक महान पुस्तक है क्योंकि यह वास्तव में भगवान द्वारा सिखाई गई थी। सभी के लिए व्यावहारिक। एक तरह से ऐसा कुछ भी नहीं है जो भगवद् गीता में न हो। अशिक्षित जैसी कोई चीज नहीं है। अगर तुम देख सकते हो, तो सब कुछ है।

इसलिए यह युगों से सभी के लिए एक मानक शास्त्र रहा है। इसके अलावा, कितने भी युग बदल जाएं, कितने ही शास्त्र समय के गर्भ में आकर विलीन हो जाएं, 'भगवद् गीता' सबके लिए मानक और व्यावहारिक है। कारण यह है कि 'भगवान' ने शिक्षण दिया और वेदव्यास ने लिखा है, इसलिए सभी को 'भगवद्गीता' का पाठ नहीं करना चाहिए बल्कि उसके अर्थ को जानना और उसका पालन करना चाहिए। इसका पालन करने वालों को कोई लाभ नहीं होता है और इसे पढ़ने वालों को कोई लाभ नहीं होता है।

एक छोटा सा उदाहरण देखते हैं। 'दूध पिओगे तो ताकत आएगी, ऐसा लाख बार कहोगे तो ताकत आएगी?' नहीं आएगी न! पीने से ही ताकत आएगी और ऐसे ही भगवद गीता का पठन करने से फल नहीं मिलेगा। आचरण करने से ही फल आएगा। इसलिए कहते है कि एक लाख बार भगवदगीता का पठन करने से बेहतर उसमें से एक श्लोक को समझ कर आचरण करने से बहुत सारा फल मिलेगा।

भगवद् गीता का अभ्यास करने के लिए पहले इसे समझना होगा। जो कारण नहीं समझते वे अभ्यास नहीं कर सकते। इसलिए 'गीता' का अध्ययन और पठन करने वालों को पहले यह समझने का प्रयास करना चाहिए कि भगवान ने क्या कहा। यह महत्वपूर्ण है। और 'गीता' का अर्थ जानने के लिए

क्या करना है?

क्योंकि गीता पढ़ाने वाला न कोई आम आदमी है और न कोई पंडित है। वह असामान्य, आत्मस्थिति में रहने वाले एक महान 'योगीश्वर' है। इस तरह के 'योगीश्वर' ने क्या सिखाया, इसे समझने के लिए हमें योग की स्थिति भी हासिल करनी होगी। योगाभ्यास करें। यानी 'ध्यान योगी' बनना है। यानी मेडिटेशन करना है। इसके साथ ही 'हल्का शाकाहारी आहार' लें। तभी भगवद् गीता को अच्छी तरह से समझा जा सकता है। इसलिए 'भगवद् गीता' को 'ध्यान' करने वाले लोग सबसे अच्छी तरह समझते हैं। ऐसा कहा जाता है कि 'भगवद् गीता' उन लोगों द्वारा कभी नहीं समझी जाएगी जो 'ध्यान' नहीं करते हैं। अगर आप 'भगवद् गीता' को समझना चाहते हैं तो आपको एक बात और जाननी होगी!

भगवद् गीता को समझने के लिए यह जानना होगा कि असली भगवान कौन है। कारण यह है कि संसार में ईश्वर मूर्ति या चित्र के रूप में विद्यमान है। इसलिए भगवद् गीता में भगवान जहां भी कहते हैं कि मैं हूं, हर किसी को अपनी तस्वीर या आकृति के अलावा कुछ भी याद नहीं रहता। वे श्रीकृष्ण को रूप मानकर गीता को समझने का प्रयास कर रहे हैं। यह एक और कारण है कि गीता समझ में नहीं आती। लेकिन भगवान अर्जुन को स्पष्ट रूप से बता दिया गया था कि वह आत्मा है।

अहमात्मा गुडाकेशा सर्वभूताशय स्थितः (भ.गी. 10-20)

हे अर्जुन! कहते हैं कि मैं समस्त प्राणियों में निवास करने वाली आत्मा हूँ। अर्थात, उन्होंने अदृश्य, अविनाशी, सर्वव्यापी, शक्तिशाली 'आत्मा' होने का दावा किया। लेकिन इसने मूर्ति, आकृति या फोटो होने का दावा नहीं किया। लेकिन वे हर चीज को भगवान का रूप समझकर गीता को समझने की कोशिश कर रहे हैं। एक छोटा सा उदाहरण देखते हैं।

वीतराग भयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः

बहवो ज्ञानतपसापूतामदभावमागताः (भ.गी. 4-10)

तात्पर्यः- जिन्होंने स्नेह, भय और क्रोध को त्याग दिया है, जिन्होंने मेरे पास ही अपना मन रखा है, जिन्होंने मेरी शरण ली है, वे इस ज्ञान की तपस्या से बहुत

हैं। उन्होंने पवित्र होकर मेरा रूप धारण किया है।

जो मुझ में मग्न होने के इच्छुक है, और "मेरी शरण में आए हुए" इस शब्द को बहुत से लोग मूर्ति या चित्र मानते हैं और उन्हें मन से देखकर पूजा और भजन के माध्यम से उनकी शरण लेते हैं। लेकिन जो लोग 'ईश्वर' को 'आत्मा' समझते हैं वे 'ध्यानम' के माध्यम से ईश्वर यानी आत्मा का सहारा ले रहे हैं। यह देखा जा सकता है कि दोनों ही मामलों में वे भगवान का सहारा ले रहे हैं।

लेकिन जो नहीं समझते वे भगवान के 'झूठे रूप' का सहारा लेते हैं। जो समझते हैं वे भगवान के 'सच्चे रूप' की शरण लेते हैं। लेकिन भगवान झूठा नहीं है, है ना? वह सत्यरूप हैं। इसलिए जो 'ध्यान' द्वारा उनके वास्तविक रूप की शरण लेते हैं, वे ही प्रभु को प्राप्त कर सकते हैं।

इस प्रकार, यदि हम गीता में 'भगवान' को 'आत्मा' के रूप में समझते हैं और उस अर्थ में इसका अध्ययन करते हैं, तो हम भगवद् गीता को अच्छी तरह से समझ पाएंगे। तभी हम अच्छा अभ्यास कर सकते हैं। हमें जीवन में अनेक लाभ मिलते हैं। इसलिए, गीता में, जब भी भगवान कहते हैं कि मैं, मुझे, हमें यह जानना और याद रखना चाहिए कि यह 'आत्मा' है। गीता को इस प्रकार समझने का प्रयास करना चाहिए। किसी को भगवान के रूप में रूप का स्मरण नहीं करना चाहिए। निराकार, निर्गुण, 'आत्मा ही प्रभु है' का बार-बार स्मरण करना चाहिए। उसे अपनी आत्मीयता को समझना चाहिए। इसे ईश्वर के 'दर्शन' के नजरिए से देखा जाना चाहिए। बस इतना ही, पर 'नजर' से मत देखो।

भगवद् गीता को 'दर्शन' की दृष्टि से देखने वाले ही अच्छी तरह समझते हैं। अच्छा अभ्यास करें। अच्छे परिणाम प्राप्त करें। यह 'तत्व दृष्टि' भी उन्हीं को समझ में आती है, जो उस ईश्वर की शरण अर्थात 'आत्मान' अर्थात 'ध्यान' द्वारा ग्रहण करते हैं। तो ध्यान करें। जो जितना अधिक ध्यान करता है, वह 'गीता' को उतना ही बेहतर समझता है। जितना अधिक आप समझते हैं, उतना ही बेहतर आप अभ्यास कर सकते हैं। शुभ परिणाम प्राप्त होंगे। कारण यह है कि जो 'ध्यान' करते हैं वे शरीर, मन और बुद्धि की अवस्थाओं को पार कर 'आत्मा' की स्थिति में पहुँच जाते हैं। केवल उसी अवस्था में 'भगवद् गीता' को अच्छी तरह से समझा जा सकता है।

'भगवद् गीता के अनुसार ज्ञानी और अज्ञानी!'

दुनिया में हर कोई इंसान है। सब कुछ इंसानों जैसा दिखता है। लेकिन उनका व्यवहार बहुत अलग है। सोचने के तरीके में अंतर है। बोलने के तरीके में अंतर है। किए गए कर्म और इच्छा में बहुत अंतर होता है। इतना ही नहीं, बहुत से लोग दुखी हैं। कुछ खुशी से जी रहे हैं। कुछ दुनिया में दूसरों की सेवा कर रहे हैं। कई दुनिया और दूसरों को नुकसान पहुंचाते हैं। वे नुकसान और कठिनाई का कारण बनते हैं। कोई पाप कर रहा है तो कोई पुण्य कर रहा है। यदि बहुत से लोग यह जाने बिना कि परमेश्वर कौन है आराधना कर रहे हैं! ईश्वर के 'आत्मा दर्शन' को कुछ ही लोग जानते हैं और उसके अनुसार साधना करते हैं।

और मानव व्यवहार ऐसा क्यों है इसका कारण? मनुष्य के पास सृष्टि के ईश्वर के 'ज्ञान' की कमी है। ऐसे ज्ञान से रहित व्यक्ति 'अज्ञानी' कहलाते हैं। जिन्हें 'ज्ञानी' कहा जाता है। ईश्वर और ईश्वर की रचना से संबंधित 'ज्ञान' रखने वालों का व्यवहार एक प्रकार का होता है। जिनके पास नहीं है, अर्थात 'अज्ञानी' अलग व्यवहार करते हैं। जो 'ज्ञानी' हैं वे ईश्वर, सृष्टि और सृष्टि के गुणों के अनुरूप आचरण करते हैं। जिन 'अज्ञानी' को वह ज्ञान नहीं है, वे उस ईश्वर और सृष्टि के गुणों के विपरीत कार्य करते हैं।

वे ईश्वर और सृष्टि के अनुसार व्यवहार करते हैं। इसके बाद हमेशा खुश रहते है। इसके विपरीत करने वालों को परेशानी होती है। वे दुख में रहते हैं। वे मोक्ष के लिए प्रार्थना और पूजा कर रहे हैं। एक तरह से, 'किसी को कठिनाइयाँ हैं! ऐसा इसलिए है क्योंकि वे सृष्टि के सिद्धांतों के विपरीत कार्य कर रहे हैं' ऐसा व्यवहार करने का कारण उनका 'अज्ञान' है।

इसलिए कठिनाइयों, समस्याओं और दुखों से छुटकारा पाने के लिए

सबसे पहले 'अज्ञान' से छुटकारा पाना चाहिए। 'ज्ञान' अर्जित करना चाहिए। हमें 'बुद्धिमान लोगों' की जरूरत है। तब जीवन आनंदमय हो जाता है। और क्या हम 'अज्ञानता' में हैं? क्या हम 'ज्ञान' में हैं? उसे कैसे पता करें? इसका खुलासा भगवान श्रीकृष्ण ने भगवद् गीता में ही किया है। और भगवान के अनुसार दृश्य में कौन है? कौन अज्ञानी है? आइए देखते हैं। आइए पहले देखते हैं कि 'ज्ञानी' कौन हैं। आइए देखें कि वे कैसे हैं और भगवान के संदेश के अनुसार उनका व्यवहार कैसा होना चाहिए।

अमानित्वमदंभित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवं ।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः।। (भ.गी. 13-8)

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च।
जन्म मृत्युजराव्याधिदुखदोषानुदर्शनं।। (भ.गी. 13-9)

आसक्ति रनभिस्श्वञ्जः पुत्रदारगृहादिषु ।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोप पत्तिषु।। (भ. गी. 13-10)

मयि चानन्य योगेन भक्ति रव्यभिचारिणी।
विविक्त देश सेवित्वमरतिर्जनसंसदि।। (भ.गी. 13-11)

अध्यात्म ज्ञाननित्यत्वं तत्त्वज्ञानार्थदर्शनं।
ऐत ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोन्यथा ।। (भ.गी. 13-12)

स्वयं की प्रशंसा न करना (मन में नहीं, शब्दों में नहीं) व्यर्थ नहीं होना। अन्य प्राणियों को अहिंसा (अहिंसा, नरभक्षण), धैर्य धारण करना, सदाचारी होना अर्थात स्वार्थी न होना, बाह्य और आन्तरिक शुद्धि अच्छे सद्गुणों को धारण करना, मन का अच्छा नियंत्रण (ध्यान के माध्यम से)। इन्द्रिय पदार्थ अर्थात शब्द (कान), स्पर्श (त्वचा), रूप (नेत्र), रस (जीभ), गंधम (नाक) गलत काम के बारें में सोचना।

पुत्रों (संतानों) को उसकी पत्नी, घर, धन में कोई दिलचस्पी नहीं है, और वह यह नहीं महसूस करता है कि वह उन सुखों और दुखों का मालिक है जो उन पर पड़ते हैं। पसंद और नापसंद के मामले में समभाव रखना।

मुझ पर (आत्मा) अनन्य भक्ति रखना, एकांत वास का शरण लेना, भीड़ मे प्रीती न रखना।

निरंतर आध्यात्मिक ज्ञान (आत्मा का ज्ञान) में बने रहना, तत्त्व ज्ञान (आत्मतत्व अर्थात ईश्वर का तत्त्व) के महान लाभ को जानना, वह सब ज्ञान कहा जाता है।

उपरोक्त श्लोकों के माध्यम से ईश्वर के ज्ञान का संचार किया गया है। ऐसा करने वाले 'ज्ञानी' हैं। ऐसे लोग हमेशा खुश रहते हैं। वे भी अंत में मुक्ति प्राप्त करते हैं। क्या आपकी व्यवहार ऐसा है? या नहीं ? इसके बारे मे सोचो। यदि ऐसा है तो आप 'बुद्धिमान' हैं, अन्यथा आप 'अज्ञानी' हैं चाहे आप कुछ भी सोचें। तुम निश्चय ही दुःख में पड़ोगे। आपके पास कितने भी भाग्य, धन, सुख, प्रसिद्धि और पद हों, आपको शांति नहीं मिलेगी। 'उदासी' होती है।

साथ ही ईश्वर की 'अज्ञानता' क्या है? किसी भी प्रकार का व्यवहार अज्ञान में भी जाना जाता है। इसके अलावा 'ज्ञानी' में दिव्य गुण हैं और 'अज्ञानी' असुरों के रूप में भगवान ने उन्हें संबंधित गुणों से परिचित कराया है। आइए आगे के श्लोकों में देखते हैं कि ऐसे गुणों वाले 'अज्ञानी' कौन हैं।

प्रवृत्तिं च निवृत्तिम च जना न विदुरासुराः।
न शौचं नापी चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते ।। (भ.गी. 16-7)

तात्पर्यः असुर-प्रकृति वाले लोग न तो धर्म प्रवृत्ति को जानते हैं और न ही अधर्म निवृत्ति को। उनमें तो कोई शुद्धता या कोई रिवाज़ (सत्कर्मानुष्ठान) कोई सत्य नहीं होता।

काम माश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः।
मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान प्रवर्तन्तेशुचिव्रता ।। (भ.गी. 16-10)

वे अतृप्त वासना (इच्छाएं) हैं और वे अभिमान, मद (अभिमान) से जुड़े हुए हैं और अज्ञानता से वे दुष्ट कार्यों में शरण लेते हैं और नीच व्यवसायों के लोगों के रूप में व्यवहार करते हैं।

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्या येनार्थसंचयान।। (भ.गी.16-12)

अहंकारः- ये उच्च आशाओं (आशाओं, बंधनों) से बंधे होते हैं और मुख्य रूप

से काम और क्रोध का सहारा लेते हैं और अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए अन्यायपूर्ण तरीकों से धन की तलाश करते हैं।

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम।
इदमस्ती दमसि मे भविष्यति पुनर्धनं ।। (भ.गी. 16-13)
असौ मया हतशत्रुर्हनिष्ये चापरानपि।
ईश्वरोहमहं भोगी सिद्धोहं बलवान सुखी।। (भ.गी. 16-14)
आढयोभिजनवानस्मि कोन्योस्ति सदृशो माया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिता । (भ. गी. 16-15)
अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः कामभोगेषु सतांति नरकेशुचौ ।। (भ.गी.16-16)

वे यह भी कहते हैं, 'मुझे जो चाहिए वह मिल गया है। मुझे यह इच्छा अब मिल सकती है; मेरे पास यह पैसा अभी है, और मुझे और पैसा मिल सकता है।'

मैंने इस दुश्मन को मार डाला। दुश्मनों को भी मार सकता है; मैं प्रभु हूँ, मैं महान हूँ। मैं सब सुख भोग रहा हूँ। वह अपने कार्य को पूरा करने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली है। मजबूत, खुश और समृद्ध।

उनका जन्म एक कुलीन परिवार में हुआ था। वह मेरे बराबर है और कौन है वहाँ? मैं यज्ञ करता हूँ, दान देता हूँ, मुझे खुशी महसूस होती है।

उसके अनुसार जो अज्ञान से मोहित होते हैं, वे नाना प्रकार के मनोभावों वाले होते हैं। जो मोह (पत्नी, पुत्र, पौत्र के लिए प्रेम) से आच्छादित हैं। वे वासना (इच्छाओं) का अनुभव करने में अत्यधिक रुचि रखते हैं। ये सभी असुर प्रवृत्ति के हैं अर्थात 'अज्ञान' में हैं। वे सब नरक में जाते हैं।

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः।
यजन्ते नाम यज्ञै स्ते दम्भनाविधिपूर्वकं।। (भ.गी. 16-17)

वे खुद को ऊंचा उठाते हैं। कोई शिष्टाचार नहीं है। वे धन और प्रशंसा (महानता) के कारण धार्मिक हैं। अहंकार, बल, अभिमान, वासना, क्रोध अच्छे हैं। वे अपने शरीर में और दूसरों के शरीर में आत्मा (आत्मा) को नहीं जानते और सबसे घृणा करते हैं। वे ईर्ष्यालु हैं। अर्थात महानता के लिए विज्ञान के

विरूद्ध यज्ञ किए जाते हैं।

इस प्रकार भगवान ने उन लोगों के व्यवहार के बारें में बताया जो अज्ञान में हैं। ऐसा व्यवहार करने वालों के लिए वह कैसी स्थिति निर्मित करेगा! निम्न श्लोक में कहा गया है।

तानहं द्विषतः क्रूरान संसारेषु नराधमान
क्षिपाम्यजस्र माशुभा नासुरीष्वेव योनिष। (भ.गी. 16-19)

तात्पर्यः- इस प्रकार मनुष्य जो मुझ से घृणा करते है, जो क्रूर है, उन्हें जन्म और मृत्यु के दुखी संसार में फेंक दूंगा और उन्हें असुरों के गर्भ में जन्म दूंगा जो बहुत दुखी हैं।

इस प्रकार, भगवान ने अज्ञानियों के भाग्य को प्रकट किया। और क्या हम अपने व्यवहार से अनभिज्ञ हैं? क्या हमें ज्ञान प्राप्त हुआ है? यह भी जाना जा सकता है। हम भविष्यवाणी कर सकते हैं कि हमारा जीवन और हमारा भविष्य कैसा होगा। यदि हमारा व्यवहार अज्ञानी है तो हमें अपना व्यवहार बदलना होगा। ज्ञान बढ़ाओं। नहीं तो हम हारे हुए हैं। भुगतने वाले हम हैं।

हमारा जीवन हमारे कर्मों पर निर्भर करता है। लेकिन यह हमारे द्वारा की जाने वाली पूजा पर निर्भर नहीं करता है। कर्म हमारे 'ज्ञान और अज्ञान' पर निर्भर करता है। इसलिए सब अज्ञान को दूर करना चाहिए। व्यवहार को बदलना चाहिए। भगवान ने जो सिखाया है उसके अनुसार खुद को बदलना चाहिए। अच्छे से पेश आएँ। जीवन है, यह बहुत जरूरी है..

अज्ञान को दूर करने और ज्ञान प्राप्त करने का तरीका क्या है? इसे करने के दो तरीके हैं। (1) हल्का शाकाहारी आहार लेना चाहिए। (2) श्वास पर ध्यान देना चाहिए। इनके सिवा और कोई रास्ता नहीं है। इन दोनों का अभ्यास करने वाले ही ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। वे बुद्धिमान पुरूषों की तरह कार्य कर सकते हैं। परेशानियों और दुखों से छुटकारा पा सकते हैं।

इसलिए पत्री जी कहते है -

'ध्यान से ज्ञान - ज्ञान से मुक्ति'
इसलिए 'ध्यान करो - मुक्ति पाओं'।

ब्रह्मर्षि पत्री जी के सत्य वचन-1

1) 'बीज में वृक्ष है - ध्यान में सब कुछ है!'।
2) 'जीवन ईश्वर है और शरीर मंदिर है!'
3) 'हमेशा वर्तमान में जियो!'
4) 'बलिदान अमरता लाता है!'
5) 'हम अपनी वास्तविकताओं के एजेंट हैं!'
6) 'यदि अतीत टूट गया है, तो वर्तमान टूट जाएगा!'
7) 'ध्यान के माध्यम से ही संकल्प शक्ति'
8) दान ही धर्म है- धर्म ही पुण्य है।
9) 'इस जन्म को अपना अंतिम जन्म बनाओ!'
10) 'हमने अपना जन्म चुना है!'
11) 'ध्यान सभी ज्ञान का मूल है!'
12) ध्यान के माध्यम से दिव्य ज्ञान का आलोक!
13) 'आत्म-ज्ञान के माध्यम से दुनिया तक पहुँच!'
14) 'मुंह के शब्द माथे पर लिखे गए हैं!'
15) 'हिंसा को छोड़ दिया जाए तो मनुष्य हंस है, ईश्वर है!'
16) हिंसा परमो धर्म है !
17) 'सभी प्राणियों के साथ मित्रता बुद्धत्व है!'
18) 'ध्यान ज्ञान है - ज्ञान मुक्ति है!'
19) 'किसी बात पर श्रद्धा होगी वैसा ही ज्ञान मिलेगा।
20) जीवन में हर किसी का लक्ष्य नर नारायण बनना है!
21) यदि आप शास्त्र पढ़ते हैं, तो आप विद्वान बनेंगे। यदि आप ध्यान करेंगे, तो आप ऋषि बनेंगे।
22) 'दूसरों की बुराई करना पाप है। - दूसरों की भलाई करना पुण्य है।'
23) 'दूसरों का अपकान करना पाप है। दूसरों का उपकार करना पुण्य है। अपने खुद का उपकार करना मोक्ष है।'
24) 'असफलता सफलता की सीढी है!'

Note from the Publisher

MB Publishing House is India's first self-publishing platform for the mind, body & soul.

Are you looking to share your stories and experiences with the world? We publish a wide range of books on self-help and spirituality.

Visit our website to explore our books
www.mbpublish.com

Also, feel free to get back to us at **contact@mbpublish.com**, with any feedback or suggestions! We would love to hear from you.

Call us on **+91 8447749297** for bulk orders, or if you'd like to publish with us.

/mbpublishinghouse

@mbpublishinghouse

MB Publishing House

श्री तटवर्ती वीरा राघवराव का हिन्दी किताब

1) आत्म शास्त्र । Rs.200/-

2) ध्यान विद्या । Rs.160/-

3) भगवद् गीता का सार । Rs.160/-

4) एक बौर जन्म । Rs.160/-

5) सत्य मार्ग । Rs.160/-

6) भगवान कौन हैं। Rs.120/-

7) कर्म सिद्धांत । Rs.120/-

8) ब्रह्म ज्ञान। Rs.100/-

9) यह जीवन क्यों हैं ? Rs.100/-

For Books Please Contact :

TATAVARTHI VEERA RAGHAVARAO

BHIMAVARAM. Ph: 94403 09812

दुनिया में हर कोई भगवान की पूजा को महत्व दे रहा है, लेकिन भगवान जो कहते हैं उसे करने को महत्व नहीं दे रहे हैं। ईश्वर महान है। साधारण महान नहीं है। वह अवर्णनीय रूप से महान हैं।

यह किसी महान व्यक्ति की पूजा करने के बारें में नहीं है। एक दम बढ़िया उन्होंने जो कहा है उस पर अमल करना चाहिए! यह बात सभी को समझनी चाहिए।

अगर पूजा से सभी समस्याओं का समाधान हो जाता है तो भगवान को धरती पर आने की कोई आवश्यकता नहीं है। सभी नारों के माध्यम से उपदेश देने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिए, सबसे ऊपर, भगवान ने कहा। अभ्यास महत्वपूर्ण है। भगवान ने भगवद् गीता में जो कुछ भी सिखाया है वह दुख को दूर करने का मार्ग है, मोक्ष का मार्ग है। यही बात सभी पर लागू होती है। ब्रह्मर्षि पत्री जी के मार्गदर्शन में, यह पुस्तक भगवान श्री कृष्ण द्वारा सिखाए गए साधना मार्ग का अनुसरण करते हुए, भगवान श्री कृष्ण द्वारा सिखाए गए ज्ञान के विशाल सागर में सीखे गए कुछ सत्यों को आप तक पहुँचाने का एक छोटा सा प्रयास है। आशा है कि पाठक पढ़ेंगे, समझेंगे, अभ्यास करेंगे और आगे बढ़ेंगे...।

- तटवर्ती वीर राघव राव

Rs.160/-

MB Publishing House
/mbpublishinghouse
@mbpublishinghouse